TEXT FLY WITHIN
THE BOOK ONLY

TIGHT BINGING
BOOK

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_178028
UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H954 V65P Accession No. P.G.H 2603

Author विद्यालंकार जयचन्द्र

Title पुरखों का चरित - तीसरी

This book should be returned on or before the date last marked below. पो ओ

OUP—43—30-1-71—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

तीसरी पोथी मिश्रित

मध्य काल पूर्व खंड

प्रवक्ता

जयचन्द्र विद्यालंकार

प्रकाशक

हिन्दी-भवन

इलाहाबाद

१९५५] [मूल्य ?॥)

प्रकाशक—
इन्द्रचन्द्र नारंग
हिन्दी-भवन
३१२ रानीमंडी,
इलाहाबाद—३

पहला प्रकाशन ... १९५५

मुद्रक—
इन्द्रचन्द्र नारंग
कमल मुद्रणालय
३१२ रानी मंडी,
इलाहाबाद—३

न हि तृप्यामि पूर्वेषां शृण्वानश्चरितं महत्

(नहीं अघाता हूँ पुरखों का सुनते सुनते चरित महान्)

—महाभारत २. ५३. ११

पुरखों का चरित—तीसरी पोथी

चरित-सूची

६. कन्नौज साम्राज्य पर्व पृष्ठ ३—१०७

१. हर्षवर्धन शीलादित्य ५

२. मुहम्मद इब्न कासिम १९

३. मुक्तापीड ललितादित्य ३०

४. चमार की कुटिया ३६

५. धर्मपाल, जयापीड, नाहड़देव, गोविन्द ३९

६. देवपाल, अमोघवर्ष, मिहिरभोज ५६

७. सुय्य अन्नपति ६४

८. मुंज, महमूद, राजेन्द्र, भोज ७६

९. विक्रमांक, चंद्रदेव, सिद्धराज, पृथ्वीराज ९५

नक्शा-सूची

९. भारतवर्ष—पहले मध्य काल के मुख्य प्रदेश और स्थान पृष्ठ ५९
१०. कश्मीर और उसके पड़ोस के प्राचीन प्रदेश पृष्ठ ६७

चित्र-सूची

२१. हर्ष का हस्ताक्षर पृष्ठ ३२ के सामने
२२. नालन्दा विद्यापीठ की मुहर पृष्ठ ३२ के सामने
२३. ललितादित्य के बनवाये मार्तंड मन्दिर के खँडहर पृष्ठ ३३ के सामने
२४. नालन्दा महाविहार के खँडहर पृष्ठ ९६ के सामने
२५. महमूद का टंका पृष्ठ ९७ के सामने
२६. फीरोजशाह के कोटले पर अशोक की लाठ पृष्ठ ९७ के सामने

पुरखों का चरित

पहली और दूसरी पोथी

की कहानी के अनेक सूत्र तीसरी पोथी में चले आते हैं। आपने तीसरी पोथी आरम्भ करने से पहले पहली दोनों पढ़ी ही होंगी।

●

इन तीनों पोथियों को पढ़ने से पहले अपने देश का प्रारम्भिक परिचय पाना चाहिए। उसके लिए इसी प्रवक्ता का किया अपने देश का वर्णन

हमारा भारत

भी आपने पढ़ा होगा। वह इन चरितों की भूमिका है।

●

अगली पोथियों की राह देखिए

अपने पुरखों का चरित सुनने के साथ साथ यह भी जानना चाहिए कि मनुष्य मनुष्य कैसे बना। मनुष्य के विकास की वह बात आजकल के समूचे वैज्ञानिक विचार की बुनियाद है। उसे समझने के लिए इसी प्रवक्ता की कही हुई

मनुष्य की कहानी

पढ़िए।

मनुष्य पशु से मनुष्य कैसे बना और उसने सभ्यता का विकास कैसे किया सो इसमें अत्यन्त सरल और रुचिकर रूप में बताया गया है।

●

जगत्प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्व० डा० बीरबल साहनी की सहधर्मिणी तथा पोलियोबोटानिकल इन्स्टीट्यूट (पुराण-वनस्पति-प्रतिष्ठान) लखनऊ की अध्यक्षा श्रीमती सावित्री साहनी उसके बारे में लिखती हैं कि **वह 'बच्चों और बूढ़ों को समान रूप से आकर्षित करने की क्षमता रखती है। सामान्य ज्ञान की ऐसी सुन्दर पुस्तकों की हमारे देश को बड़ी आवश्यकता है।'**

पुरखों का चरित

६. कन्नौज साम्राज्य पर्व

१. हर्षवर्धन शीलादित्य

यशोधर्मा ने अपना कोई राजवंश नहीं चलाया। उसके बाद गणराज्य भी फिर नहीं उठे। किन्तु एक गुप्त महाराजाधिराज ५४४ ई० के लगभग फिर उठ खड़ा हुआ। वह नाम का महाराजाधिराज था, तो भी लगभग आधी शताब्दी तक किसी न किसी तरह अपने पद को निबाहता रहा।

गुप्त सम्राटों के वंश से निकला हुआ एक शाखा-वंश भी इसी समय उठा। उसे हम पिछला गुप्त वंश कहते हैं। इस वंश के पहले पुरुष कृष्ण गुप्त का गुप्त सम्राटों के वंश से क्या सम्बन्ध था सो कहा नहीं गया। शायद वह सम्बन्ध कहने योग्य नहीं था, अर्थात् कृष्ण गुप्त किसी गुप्त सम्राट् की रखैल से पैदा हुआ था। जो भी हो, इस

युग में गुप्त महाराजाधिराज के प्रतिनिधि रूप में वास्तविक शासक इसी वंश के राजा रहे। इनका दावा समूचे गुप्त साम्राज्य पर, परन्तु अधिकार केवल मगध-बंगाल और पास के प्रदेशों पर या कुछ काल के लिए मालव देश अर्थात् पूरबी राजस्थान पर रहा।

यशोधर्मा के साथ कई प्रदेशों के जिन नेताओं ने हूणों को खदेड़ने में भाग लिया था उन्होंने इन पिछले गुप्तों की परवा न कर अपने राजवंश स्थापित कर लिये। इस तरह का एक राजवंश थानेसर में चला, दूसरा पंचाल का मौखरि वंश था जिसने कन्नौज को राजधानी बनाया।

तीसरा नया राजवंश पच्छिमी भारत में गुर्जर लोगों का था। उनकी राजधानी दक्खिनी मारवाड़ में भिन्नमाल थी। मारवाड़ और गुजरात मिला कर इस युग में उनके कारण "गुर्जरत्रा" कहलाने लगा। उसी नाम का हिन्दी रूप गुजरात है। वास्तव में यह नाम छठी शताब्दी ई० से ही चला। इससे पहले हम केवल सुभीते के लिए गुजरात प्रदेश को गुजरात कहते रहे हैं। सुराष्ट्र में इसी समय मैत्रक राजवंश स्थापित हुआ। उसकी राजधानी आजकल के भावनगर के पास वलभी थी।

दक्खिन भारत में चालुक्य या सोलंकी नामक नया राजवंश खड़ा हुआ। चालुक्यों ने कादम्बों का राज्य भी पूरा जीत कर पच्छिमी से पूर्वी समुद्र तक अपना राज्य फैला लिया। इनकी राजधानी वातापी (=बीजापुर ज़िले में बदामी) नगरी थी। कृष्णा नदी के दक्खिन काञ्ची का पल्लव राज्य ज्यों का त्यों बना रहा, प्रत्युत पहले से भी प्रबल हो उठा।

मौखरियों का पिछले गुप्तों से सीधा मुकाबला हुआ, जिसमें मौखरि इन गुप्तों को पछाड़ते रहे। कृष्ण गुप्त के पड़पोते कुमार गुप्त का ५५५ ई० के लगभग ईश्वरवर्मा मौखरि से युद्ध हुआ। फिर कुमार गुप्त का बेटा दामोदर गुप्त ईश्वर-वर्मा के बेटे शर्ववर्मा से जूझता हुआ "मूर्च्छित हो गया और स्वर्ग की अप्सराओं के स्पर्श से जागा"—अर्थात् मर कर स्वर्ग सिधारा। शर्ववर्मा ने सुराष्ट्र, आन्ध्र और गौड (मध्य पच्छिमी बंगाल, मालदह ज़िला और पासपड़ोस) तक विजय किया। मौखरियों के प्रताप से अब कन्नौज नगर की वही प्रतिष्ठा हो गई जो पहले पाटलिपुत्र की थी। आगे छः सौ बरस तक कन्नौज उत्तर भारत का केन्द्र माना जाता रहा।

दामोदर गुप्त के युद्ध में मारे जाने से गुप्त राज्य डगमगा गया। कामरूप-प्राग्ज्योतिष (असम) के राजा समुद्र गुप्त के युग से गुप्तों का आधिपत्य मानते थे, अब वहाँ के राजा सुस्थितवर्मा ने अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। दामोदर के बेटे महासेन गुप्त ने कामरूप पर चढ़ाई कर उसे हराया। पर इसके बाद महासेन के अपने राज्य से भी पैर उखड़ गये। उसने भाग कर मालव देश में शरण पाई और वहाँ का राजा बन गया। मगध-बंगाल-उड़ीसा में शशांक नामक नया राजा उठ खड़ा हुआ।

थानेसर के राजा प्रभाकरवर्धन ने गन्धार, सिन्धु और गुर्जर देश अर्थात् पच्छिमी पंजाब, मारवाड़ और गुजरात को जीत कर उत्तरपच्छिमी भारत में अपना राज्य फैलाया। उस प्रसंग में उसने मालव (पूरबी राजस्थान) को भी अधीन किया और वहाँ के राजा ने अपने दो बेटे कुमार गुप्त और माधव गुप्त उसे ओल दे दिये।

प्रभाकरवर्धन की तीन सन्तानें थीं—राज्यवर्धन, हर्ष-वर्धन और राज्यश्री। कुमार और माधव गुप्त बचपन से राज्यवर्धन और हर्षवर्धन के अनुचर रहे। राज्यश्री के सयानी होने पर उसका विवाह मौखरि राजा अवन्तिवर्मा

के बेटे ग्रहवर्मा के साथ हुआ।

प्रभाकरवर्धन ने अपने बड़े बेटे राज्यवर्धन को बचे-खुचे हूणों को मार भगाने के लिए कश्मीर की चढ़ाई पर भेजा। छोटा बेटा हर्षवर्धन उसके पीछे पीछे शिकार को गया। वह कश्मीर की तराई के जंगल में था कि उसे पिता की बीमारी की खबर मिली। हर्ष के लौट आने पर प्रभाकर ने प्राण त्याग दिये (६०५ ई०)।

प्रभाकर को मरा सुन मालव राजा ने, जो शायद कुमार गुप्त और माधव गुप्त का बड़ा भाई देव गुप्त था, कन्नौज पर एकाएक चढ़ाई की और ग्रहवर्मा को मार कर राज्यश्री को कैद में डाल दिया। तब बंगाल-बिहार-उड़ीसा के राजा शशांक के साथ मिल कर वह थानेसर पर चढ़ाई की तैयारी करने लगा। खबर पाते ही राज्यवर्धन उधर बढ़ा और "मालव सेना को खेल के खेल में जीत कर" शशांक की तरफ मुड़ा। शशांक ने उससे मैत्री दिखला कर उसे छल से मार डाला।

तब जवान हर्ष शशांक के मुकाबले को निकला। कन्नौज पहुँच कर उसने सुना कि पिछली गड़बड़ में राज्यश्री कैद से निकल निराश हो विन्ध्याचल के जंगल में कहीं

चली गई है। अपने सेनापति भंडि को शशांक के पीछे भेज हर्ष बहन की खोज में चला। उसने ठीक ऐसी वेला उसे पाया जब वह सती होने को तैयार थी। भाई के मिलने पर राज्यश्री ने सती होने का विचार छोड़ दिया, फिर भी भिक्षुणी होना चाहा। पर हर्ष ने उसे समझाया कि कन्नौज साम्राज्य को सँभालने की ज़िम्मेदारी तुमपर है, उस कर्तव्य से तुम्हारा भागना उचित नहीं है। राज्यश्री ने कन्नौज वापिस जा कर राज सँभालना मान लिया और यह तय हुआ कि हर्ष उसका प्रतिनिधि बन कर कन्नौज का राजकाज भी चलायगा।

यों कुरुक्षेत्र और पंचाल दोनों साम्राज्यों की शक्ति हर्ष के हाथ आ गई। छः बरस तक उसने अपने सैनिकों की वर्दियाँ और जंगी हाथियों के हौदे कसे रक्खे और कश्मीर से उड़ीसा तक उत्तर भारत को एक साम्राज्य में ला दिया। प्राग्ज्योतिप (असम) के राजा "भास्करवर्मा का उसने स्वयं अभिषेक कराया, सिन्धुराज को कुचल कर उसका राज्य अपने हाथ में कर लिया और तुखार पहाड़ों के दुर्गों से कर वसूला।" तुखार देश कश्मीर के उत्तर था। वलभी का राजा ध्रुवसेन हर्ष से हार कर भरुच के छोटे

गुर्जर वंश के राजा के पास भाग गया। पीछे हर्ष ने उसे अपना सामन्त बना कर अपनी इकलौती बेटी ब्याह दी।

सारे उत्तर भारत को यों एक साम्राज्य में ले आने के बाद भी हर्ष प्रजा की सुख-समृद्धि के लिए बराबर घूमता रहता। वह जब दौरे पर रहता, उसके ठहरने को फूस के झोंपड़े बनाये जाते, जो उसके जाने के बाद उखाड़ दिये जाते। वह सदाचार और शील की मूर्त्ति था, इसलिए इतिहास में उसका नाम शीलादित्य पड़ा। उसने एकपत्नी-व्रत धारण किया और आजन्म उसे निबाहा।

हर्ष ने दक्खिन भारत को भी जीतना चाहा। पर महाराष्ट्र-कर्णाटक-आन्ध्र के राजा सत्याश्रय पुलिकेशी ने नर्मदा के घाटों पर अपनी सेना को ऐसा सजग रक्खा कि हर्ष नर्मदा को किसी तरह न लाँघ सका। सत्याश्रय पुलिकेशी दक्खिन भारत का सम्राट् था।

इसके बाद भी पाँच सौ बरस तक भारत में दो साम्राज्य रहते रहे, एक उत्तर भारत में कन्नौज का, दूसरा दक्खिन में महाराष्ट्र-कर्णाटक का।

हर्ष के ज़माने में चीन में भी ताङ नामक नया सम्राट् वंश उठा। उसका संस्थापक ताइचुङ भी समुद्र-गुप्त और

हर्षवर्धन की तरह प्रतापी और शीलवान् था।

ईरान के शाह अनुशीरवाँ ने मध्य एशिया से हूण राज्य को उखाड़ दिया था। पर अनुशीरवाँ ने हूण राज्य को "पच्छिमी तुर्कों" की सहायता से उखाड़ा था। इसलिए ५६५ ई० से—अर्थात् उत्तर भारत में जब शर्ववर्मा मौखरि का साम्राज्य था तब से—मध्य एशिया में तुर्कों का प्रभाव फैल गया।

तुर्क जाति का असल नाम असेना था। वे भी हूणों की ही एक शाखा थे। मध्य एशिया के पूर्वी छोर पर, तारीम काँठे के पूर्वी किनारे के उत्तर, हामी नाम की बस्ती है। उसके उत्तर बारकुल प्रदेश में एक पहाड़ है जो स्वर्णगिरि कहलाता था। असेना लोग उसी के पास रहते थे। उस पहाड़ की शकल फौजी टोपी जैसी है। हूण भाषा में फौजी टोपी को तुर्कु कहते थे। इससे असेना लोगों का नाम तुर्कु पड़ गया। अनुशीरवाँ ने उनकी सहायता से हूणों को हराया। इसका यह अर्थ हुआ कि हूणों के एक फ़िरके की सहायता से दूसरों को हराया। वास्तव में इसके बाद से मध्य एशिया में अनुशीरवाँ का प्रभाव नाम को ही रहा। वहाँ तुर्क सरदारों ने अपना आधिपत्य फैला लिया।

धीरे धीरे सभी हूण तुर्क कहलाने लगे।

जो तुर्क अपने मूल घरों में अर्थात् इरतिश से आमूर नदी तक रहते थे, उन्हें चीन वाले उत्तरी तुर्क कहते, और जो वहाँ से उठ कर पच्छिमी मध्य एशिया में चले आये थे उन्हें पच्छिमी तुर्क। यह उत्तर और पच्छिम का हिसाब चीन की दृष्टि से था। ६३० ई० में चीन के सम्राट् ताइचुङ ने उत्तरी तुर्कों का सारा देश जीत लिया। समरकन्द के ऋषिक राजा ने तब सम्राट् ताइचुङ से प्रार्थना की कि मुझे भी पच्छिमी तुर्कों के आधिपत्य से निकाल कर चीन के आधिपत्य में ले लें। पर ताइचुङ ने इतनी जल्दी पच्छिमी मध्य एशिया तक बढ़ना उचित न समझा।

इसी समय युआन च्वाङ नामक चीनी विद्वान् भारत की यात्रा के लिए आया। पच्छिमी चीन से तारीम नदी के उत्तर के भारतीय राज्यों में होता हुआ वहाँ से ताशकन्द समरकन्द, अफगानिस्तान, कश्मीर, गन्धार हो कर वह भारत के मध्यदेश में पहुँचा। यहाँ बरसों रहने और भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक घूमने के बाद वह फिर अफगानिस्तान, पामीर और सीता काँठे के भारतीय राज्यों

के रास्ते चीन वापिस चला गया।

युआन च्वाङ जब तारीम काँठे के उत्तर थियानशान को लाँघ कर पच्छिमी मध्य एशिया की ओर रवाना हुआ था, तब वह तुर्कों के 'खाकान' (सम्राट्) से ईसिककुल झील के पास उसकी राजधानी में मिला था। तुर्क सम्राट् ने वहाँ से हिन्दूकुश तक के लिए उसकी यात्रा का प्रबन्ध कर दिया था; अर्थात् उस सारे देश पर उस सम्राट् का आधिपत्य था। तुर्क सम्राट् का एक उपराज बदख्शाँ में रहता था। पर उन सब प्रदेशों पर तुर्कों का चाहे आधिपत्य था तो भी असल शासन उनके सामन्त रूप में पुराने ऋषिक सरदार ही कर रहे थे। हिन्दूकुश के दक्खिन अफगानिस्तान में क्षत्रिय राजा थे।

युआन च्वाङ ने अपनी भारत-यात्रा का पूरा वृत्तान्त लिखा है। उसमें अनेक मनोरञ्जक बातें हैं। उसके भारत रहते समय उसे कामरूप-प्राग्ज्योतिप के राजा भास्करवर्मा ने अपने पास बुलाया था। भास्करवर्मा ने उससे पूछा— इधर कुछ काल से भारत के अनेक प्रान्तों में एक गीत सुना गया है जिसे लोग चिनवाङ के विजयों को गीत कहते हैं; वह आपके देश का ही है न? युआन च्वाङ ने

कहा—हाँ, वह मेरे राजा की स्तुति है। चिनवाङ सम्राट् ताइ्चुङ का कुमार जीवन का पद था। उस समय उसने एक भयानक विद्रोह को दबाया था जिसकी याद में उसके सैनिकों ने वह गीत रचा था। उसे १२८ आदमी चाँदी के कवच पहने हाथों में भाले लिये नाचते हुए गाते थे।

तभी सम्राट् शीलादित्य हर्षवर्धन उड़ीसा और आन्ध्र की सीमा के गंजाम प्रदेश को जीत कर कन्नौज लौट रहा था। कजंगल नगर (आजकल के संथालपरगने में काँकजोल कस्बे) से उसे गंगा का रास्ता पकड़ना था। उसने भास्करवर्मा को आदेश भेजा कि युआन-च्वाङ को वहीं भेज दें। भास्कर ने उत्तर में सन्देश भेजा कि मेरा सिर मुझसे भले ही ले लें, चीनी विद्वान् को मुझसे न लें। इसके उत्तर में शीलादित्य ने फिर आदेश भेजा कि आप अपने सिर और चीनी विद्वान् दोनों के साथ आइए। तब वे कजंगल नगर में सम्राट् के पास आये।

युआन-च्वाङ से मिलने पर शीलादित्य ने कहा—"मैंने चीन के देवपुत्र चिनवाङ के बारे में सुना है जिसने उस देश को अराजकता और बरबादी की दशा से व्यवस्था

और समृद्धि में पहुँचाया और दूर देशों तक आधिपत्य स्थापित कर अपना सुप्रभाव फैलाया है। उसकी सन्तुष्ट प्रजा चिनवाङ के विजयों का गीत गाती है जो यहाँ भी एक अरसे से परिचित है।"

यों उस युग में भारत और चीन के बीच आदान-प्रदान इतना चलता था, और साथ ही वह नृत्यगीत इतना सुन्दर था कि उस ज़माने में भी कुछ ही बरसों के भीतर वह चीन से भारत की उत्तरपूर्वी और उत्तरपच्छिमी दोनों सीमाओं को टाप कर यहाँ की जनता तक आ पहुँचा था।

चीन और भारत के बीच तिब्बत का विस्तृत ऊँचा पठार है। वहाँ के लोग छठी शताब्दी तक शिकार और पशुपालन से जीविका चलाते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान तक विचरा करते थे। इसी से वहाँ कोई टिकाऊ राज्य खड़ा नहीं हुआ था। तिब्बत के दक्खिन पच्छिम और उत्तर तरफ़ भारतीय राज्य थे। उन तीनों दिशाओं से तथा चौथी तरफ़ चीन से तिब्बत में धीरे धीरे ज्ञान का प्रकाश पहुँचा, और वहाँ के लोग खेती करना मकान बनाना तथा लिखना भी सीख गये। तभी तिब्बत की भाषा लिखी

जाने लगी। वह लिखी गई उस लिपि में जो कि उस युग में उत्तर भारत तथा सीता-तारीम काँठों के भारतीय राज्यों में चलती थी। उसके अक्षर हमारी नागरी के समान हैं।

हर्षवर्धन के युग में पहलेपहल सारा तिब्बत एक राजा के राज्य में आया। उस राजा का नाम था स्रोङचनगम्बो। हमारे देश के पुराने लेखकों ने इस कठिन नाम का संस्कृत रूप बनाया—हिरण्यगर्भ। "हिरण्यगर्भ" ने नेपाल के राजा अंशुवर्मा ठक्कुरी की बेटी भृकुटिदेवी तथा चीन की एक राजकुमारी से विवाह किया। वे दोनों देवियाँ बौद्ध थीं। उनके प्रभाव से तिब्बतियों के रहन-सहन में बहुत से सुधार हुए।

तिब्बत में व्यवस्थित राज्य स्थापित हो जाने से भारत और चीन के बीच उसके रास्ते भी आना जाना होने लगा।

दक्खिनी सुमात्रा में श्रीविजय* नाम का नगर और राज्य पाँचवीं शताब्दी में स्थापित हुआ था। अड़ोसपड़ोस

---

* श्रीविजय नगर अब पालेम्बांग कहलाता है।

के अनेक द्वीप शीघ्र उसके अन्तर्गत हो गये। वहाँ अब शैलेन्द्र नाम का राजवंश राज्य करने लगा।

"फूनान" राज्य को उसके सामन्त चित्रसेन ने समाप्त कर वहाँ भी अब नये राज्य की नींव डाली। भारत की उत्तरी सीमा के कम्बोज महाजनपद के नाम से उस राज्य के एक प्रदेश का नाम भी कम्बोज या कम्बुज पड़ गया था और अब से वह कम्बुज राष्ट्र के नाम से ही प्रसिद्ध हुआ। वह नाम अब तक चला आता है। वहाँ के मूल निवासी ख्मेर लोग हैं। कम्बुज उपनिवेश के लोगों ने पीछे अपने नाम की यह व्याख्या की कि वे कम्बु महर्षि और मेरा अप्सरा की सन्तान हैं!

२. मुहम्मद इब्न कासिम

भारत में जब हर्ष शीलादित्य और सत्याश्रय पुलिकेशी राज कर रहे थे तभी अरब देश हज़रत मुहम्मद के प्रभाव में आ गया था। मुहम्मद से पहले अरब लोग अनेक जड-जन्तुओं को पूजते और छोटे छोटे फिरकों में बँटे हुए थे। मुहम्मद ने उन्हें यह शिक्षा दी कि अल्लाह या परमेश्वर एक है और उसे मानने वाले मुसलमान हैं जो उसकी दृष्टि में सब बराबर हैं। मुहम्मद यह अनुभव करते थे कि उन्हें यह विचार अल्लाह की प्रेरणा से ही मिला है, इसलिए उन्होंने अपने को अल्लाह का रसूल अर्थात् अवतार कहा। मुसलमानों का यह नया मत इस्लाम कहलाया। इसके अनुसार अल्लाह और रसूल को न मानने वाले काफ़िर थे।

इन शिक्षाओं के प्रभाव से अरब लोगों में उत्साह की नई लहर उमड़ उठी और वे मुसलमान बन कर काफ़िर दुनिया को जीतने के सपने लेने लगे। मुहम्मद के अपने जीवन (५७१–६३२ ई०) में ही सारा अरब उनकी छत्रछाया में आ गया। मुहम्मद के पीछे उनके परिवार के जो लोग अरबों के नेता और शासक हुए वे खलीफ़ा कहलाये। उन खलीफ़ों का साम्राज्य खिलाफ़त कहलाता था।

अरब के पड़ोस में एक तरफ़ ईरान का सासानी राज्य था और दूसरी तरफ़ रोमी साम्राज्य। ईरान के पच्छिम के एशिया के देश और मिस्र दूसरी शताब्दी ई० पू० से रोमी साम्राज्य में चले आते थे। अरब लोग उन दोनों राज्यों को जीतने के लिए बढ़े। ६३६-३७ ई० में उन्होंने सासानी राजा यज़्दगुर्द को हरा कर ईरान का मुख्य भाग दखल कर लिया। ईरान के अग्निपूजक लोग अरब विजेताओं द्वारा मुसलमान बनाये गये।

उसके बाद अरबों ने एक तरफ़ रोमी साम्राज्य से युद्ध छेड़ा, दूसरी तरफ़ समुद्र के रास्ते हमारे पच्छिमी तट पर धावे मारे। कोंकण में सत्याश्रय पुलिकेशी ने इन

धावामारों को बुरी तरह हराया। ६४३ ई० में अरब लोग ईरान के सब से पूरबी प्रान्त सिजिस्तान† को ले कर हेलमन्द नदी पर पहुँच गये जो तब भी भारत की सीमा मानी जाती थी—अर्थात् अफगान पठार तब भी भारत में गिना जाता था।

उसके अगले वर्ष (६४४ ई० में) उन्होंने मकरान पर चढ़ाई की, जो सिजिस्तान के दक्खिन और हमारे सिन्ध प्रान्त के पच्छिम है। मकरान तब सिन्ध राज्य में था। उसे बचाने के प्रयत्न में सिन्ध का राजा श्रीहर्ष-राज अरबों से लड़ता हुआ मारा गया। उसके बेटे साहसी ने युद्ध जारी रक्खा, पर दो बरस बाद वह भी खेत रहा। मकरान तब अरबों के हाथ चला गया और सिन्ध का राज्य वहाँ के ब्राह्मण मन्त्री चच ने सँभाल लिया।

श्रीहर्षराज कौन था इसका ठीक पता नहीं है। हमें सन्देह होता है कि वह कहीं हर्ष शीलादित्य ही तो नहीं था, जिसने "सिन्धुराज को कुचल कर उसका राज्य अपने हाथ में कर लिया" था और तुखार पहाड़ों से सुराष्ट्र तक

---

† 'शकस्थान' का रूपान्तर सातवीं शताब्दी तक 'सिजिस्तान' हो गया था, पीछे 'सीस्तान' हुआ।

तथा प्राग्ज्योतिष से गंजाम तक सारी भूमि को एक साम्राज्य में सम्मिलित किया था। पर इस बारे में हम अभी निश्चय से नहीं कह सकते।

इतनी बात निश्चित है कि हर्षवर्धन और मौखरियों का कुरु-पंचाल-साम्राज्य इसके बाद नहीं रहा।

मकरान लेने के चार बरस बाद अरबों ने सासानी राज्य का उत्तरपूरवी प्रान्त हरात भी ले लिया। उधर पच्छिम तरफ रोमी सम्राट् ने जब उनके मुकाबले में अपने को अशक्त देखा तब चीन के ताङ सम्राट् से सहायता माँगी। चीनी सेना रोम की सहायता के लिए मध्य एशिया तक पहुँच पाई थी कि इस बीच अरबों ने रोमी साम्राज्य के सीरिया फिलिस्तीन और मिस्र देश दखल कर लिये।

चीन का सम्राट् तब बच्चा था। उसकी माता वू उसके नाम पर शासन चलाती थी। अरब लोग ईरान और हरात से मध्य एशिया में घुसने का यत्न करेंगे यह देखते हुए सम्राट्-माता ने पच्छिमी मध्य एशिया को भी जीत कर पच्छिमी तुर्कों को वहाँ से भगा दिया (६५७-५९ ई०)। हारे हुए तुर्क सरदार कुछ अपने भाईबन्दों के पास हुनगारी भाग गये, कुछ ने भारत में शरण ली।

चीन का साम्राज्य वंक्षु तक पहुँच जाने से अफ-गानिस्तान के भारतीय राज्यों को सहारा मिला। कपिश राज्य की राजधानी अब काबुल नगरी में आ गई थी। ६६३ ई० में अरबों ने उसपर चढ़ाई कर उसे घेरा। काबुली अड़ोस-पड़ोस की बस्तियाँ उजाड़ अरब सेना के सामने से हट गये। फिर उसपर लगातार झपटे मारते रहे और अन्त में उसे निकाल कर ही दम लिया।

हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद भारत के मध्यदेश में प्रभाकरवर्धन के कैदी माधव गुप्त के बेटे आदित्यसेन ने मगध का राजा बन कर उत्तर भारत में फिर गुप्त साम्राज्य खड़ा करना चाहा (लगभग ६७२ ई०)। उसने समुद्र गुप्त की तरह पूर्वी तट के साथ साथ चोल देश तक चढ़ाई भी की। पर उसकी उस चढ़ाई के जवाब में उसके बेटे देव गुप्त को सत्याश्रय पुलिकेशी के पोते विनयादित्य ने पूरी तरह हराया (लगभग ६८० ई०)।

६७० ई० में खिलाफत की राजधानी अरब की मरुभूमि से उठ कर सीरिया के दमिश्क नगर में चली गई। ६९७ और ७०० ई० में अरबों ने फिर काबुल पर चढ़ाइयाँ कीं। फिर उसी तरह विफल। तब उधर से हार मान कर

उन्होंने सिन्ध की ओर मुँह फेरा।

वहाँ तब चच का बेटा दाहर राज कर रहा था। सिंध नदी के पच्छिमी तट पर देवल नाम का बंदरगाह था। सिंहल से पच्छिम जाते जहाजों में कुछ मुस्लिम यात्री खलीफा के लिए भेंटें लिये जा रहे थे। वे जहाज देवल पर लुट गये। खलीफा की ओर से ईरान के शासक हज्जाज ने दाहर से इसकी शिकायत की। दाहर ने उत्तर भेजा कि देवल के डाकू बड़े प्रबल हैं, वे हमारी भी नहीं सुनते। दाहर के इस प्रकार अपनी ज़िम्मेदारी टालने से खलीफा को उसके राज्य पर चढ़ाई करने का कारण मिल गया। मकरान के तट और समुद्र के रास्ते हज्जाज ने अरब सेना को देवल पर चढ़ाई करने भेजा (७१० ई०)। उस सेना का नेता उसने अपने दामाद मुहम्मद-इब्न-कासिम अर्थात् कासिम के बेटे मुहम्मद नामक नौजवान को बनाया।

देवल में एक बड़ा बौद्ध मन्दिर और विहार था जिसके शिखर पर ऊँचा झंडा फहराता था। सिन्धियों को विश्वास था कि उनमें जादू है और कि जब तक शिखर पर झंडा फहराता रहेगा तब तक देवल नगर को क्षति न होगी।

अरब सैनिकों ने ऐसे वाण मार कर जिनकी अनियों पर आग लगाने वाला लेप था, उस झंडे में आग लगा दी, तथा गुलेल के ढंग के बड़े यन्त्रों से, जिन्हें वे मंजनीक कहते थे, पत्थर मार मार कर मन्दिर का शिखर तोड़ दिया। सिन्धियों ने तब हिम्मत हार दी। अरब विजेताओं ने देवल की सारी पुरुष जनता को कतल कर दिया और नगर को पूरी तरह लूटा। उस विहार में ७०० भिक्षुणियाँ थीं जिन्हें उन्होंने बांदियाँ बना लिया। खिलाफत के नियम के अनुसार इसमें से पाँचवाँ अंश लूट खलीफा के पास भेजी गई, बाकी सेना में बाँट दी गई।

दाहर इसके बाद सिन्ध नदी के पूरब हट गया। कासिम का बेटा तब सिन्ध नदी के दाहिने तरफ के सारे प्रदेश को दखल करता हुआ दर्रा बोलान के नीचे सिबी प्रदेश तक बढ़ता गया। वहाँ दाहर के चचेरे भाई वत्सराज ने उसका डट कर मुकाबला किया। पर वहाँ की जनता में बहुत से लोग बौद्ध भिक्षु थे, जो युद्ध के समय तमाशबीन बने रहे। वहाँ भी मुहम्मद-इब्न-कासिम की जीत हुई।

तब मुहम्मद नीचे आ कर सिन्ध नदी पार करने का उपाय करने लगा। सामने दाहर की सेना थी और उसका

बेटा जयसिंह नदी का घाट रोके हुए था। पर नदी के बीच एक टापू था। उस टापू का मुखिया मुहम्मद-इब्न-कासिम से मिल गया और उसने उसे उसी प्रकार सिन्ध के पार उतार दिया जैसे आम्भि ने अलक्सान्दर को उतारा था। उस पार दाहर वैसी ही वीरता से लड़ा जैसे पुरु अलक्सान्दर से लड़ा था। चच और दाहर ने अपनी जाट प्रजा का बड़ा दमन किया था। इस कारण बहुत से जाटों ने विदेशी का साथ दिया। दाहर युद्ध में मारा गया। उसकी रानी पड़ोस के एक गढ़ में कुछ सेना ले कर जब तक बना लड़ी। अन्त में उसने अपनी बची साथिनों के साथ "जौहर" कर लिया।

मुहम्मद-इब्न-कासिम ने उसके बाद उत्तरी सिन्ध को धीरे धीरे जीतते हुए मुलतान तक दखल कर लिया। मुलतान तक पहुँचने के लिए उसे सतलज के अतिरिक्त ब्यास भी पार करनी पड़ी थी, क्योंकि ब्यास तब ऊपर ही सतलज में मिल जाने के बजाय मुलतान के नीचे तक आ कर चनाब में मिलती थी। मुलतान में एक बड़ा सूर्यमन्दिर था, जिसमें पूजा करने को भारत भर से यात्री आते थे। अरब मुस्लिम विजेताओं ने काफ़िरों के उस

मन्दिर को तोड़ा नहीं, प्रत्युत उसके चढ़ावे की आय का अंश लेते रहे।

कहते हैं खलीफ़ा के आदेश से मुहम्मद ने दाहर की दो क्वारी लड़कियों को उसके पास भेजा। खलीफ़ा के सामने उन्हें जब पेश किया गया तब उन्होंने कहा मुहम्मद ने हमें भेजने से पहले क्वारी नहीं रहने दिया। इसपर खलीफ़ा ने आदेश भेजा कि मुहम्मद-इब्न-कासिम अपने को बैल की कच्ची खाल में मढ़वा कर खलीफ़ा के सामने पेश करे। आज्ञाकारी मुहम्मद ने अपने को खाल में बन्द करवा और ऊँट पर बँधवा कर यात्रा आरम्भ की। रास्ते में दम घुटने से उसकी जान निकल गई। खलीफ़ा के सामने वह खाल खोली जाने पर उसकी लाश निकली तो दाहर की लड़कियों ने सन्तोष की हँसी हँसते हुए बताया कि हमने पिता की मृत्यु का बदला चुकाने को इसपर मिथ्या आरोप लगाया था। तब उन्होंने खलीफा को चिढ़ाते हुए पूछा कि अपनी लम्पटता के पीछे तुम अपनी प्रजा के साथ इसी तरह न्याय किया करते हो न! इसपर खलीफा ने उन्हें भी यातनाएँ दे कर मारने की आज्ञा दी और उन्होंने खुशी खुशी वैसी मौत स्वीकार की।

मुहम्मद-इब्न-कासिम के चले जाने पर दाहर के बेटों ने सिन्ध को अरबों से मुक्त करा लिया। तब सेनापति जुनैद को फिर सिन्ध जीतने भेजा गया। दाहर का बेटा जयसिंह उससे लड़ता हुआ सिन्ध नदी के नौ-युद्ध में मारा गया। जुनैद ने सिन्ध फिर जीत लिया (७२४ ई०)।

सिन्ध में अरबों के स्थापित हो जाने के बाद पड़ोसी भारतीय राज्यों से उनकी मुठभेड़ें चलने लगीं। ७३९ ई० में एक अरब सेना कच्छ हो कर दक्खिनी मारवाड़ के भिन्नमाल राज्य को रौंदती हुई उज्जैन को लूट कर सूरत ज़िले में नवसारी तक पहुँच गई। भरुच और सूरत का प्रदेश, जिसे लाट कहते थे, महाराष्ट्र के चालुक्यों के अधीन था, और सत्याश्रय पुलिकेशी का पोता अवनिजनाश्रय पुलिकेशी तब वहाँ का सेनापति था। नवसारी पर उसने उस अरब सेना का ऐसा संहार किया कि वह लौट कर वापिस नहीं जा सकी।

उज्जैन के लूटे जाने का यह अर्थ हुआ कि उत्तर भारत का साम्राज्य तब कमज़ोर था। हमने देखा है कि हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद आदित्यसेन ने वहाँ गुप्त साम्राज्य को फिर खड़ा करने का प्रयत्न किया था, पर उसके बेटे

ने विनयादित्य चालुक्य से हार खाई थी। तब कन्नौज का मौखरि वंश भी फिर जाग उठा। अरबों ने जब दूसरी बार सिन्ध जीता प्रायः तभी कन्नौज के राजा यशोवर्मा ने मगध और गौड पर चढ़ाई कर और गुप्त राजवंश को सदा के लिए मिटा कर पूरबी समुद्र तक अपना राज्य फैला लिया था। पर स्वयं यशोवर्मा को कश्मीर के राजा से हार खानी पड़ी। तब उसके प्रभाव को बड़ी ठेस लगी और दूर के प्रान्तों पर उसका नियन्त्रण ढीला पड़ गया। सो कैसे हुआ हम आगे कहेंगे।

३. मुक्तापीड ललितादित्य

हर्ष शीलादित्य के ज़माने में कश्मीर में दुर्लभवर्धन नामक व्यक्ति ने कर्कोट राजवंश की स्थापना की थी। कश्मीर के साथ साथ पूरबी गन्धार (तक्षशिला प्रदेश) भी उसके राज्य में था। पीछे हर्ष ने उसे अपने अधीन कर लिया था। पर कर्कोट राजवंश बना रहा। दुर्लभवर्धन के बेटे दुर्लभक प्रतापादित्य ने ५० बरस राज्य किया। उसके बाद उसके तीन बेटे चन्द्रापीड तारापीड और मुक्तापीड क्रमशः राजा हुए। मुक्तापीड ने ही यशोवर्मा पर चढ़ाई कर उसे हराया और उससे बहुत सी भूमि छीनी। यशोवर्मा की सभा से कवि भवभूति को भी वह अपने यहाँ ले गया।

इन कश्मीरी राजाओं का चरित कश्मीर की उत्तरी सीमा से लगे हुए चीन के महान् साम्राज्य से प्रभावित था।

कासिम का नौजवान बेटा मुहम्मद जब सिन्ध को अरब साम्राज्य में मिला रहा था, तभी एक और नौजवान, कोतैबा, मध्य एशिया में उस साम्राज्य को बढ़ाने के लिए लड़ रहा था। कुछ समय के लिए उसने चीनियों के पैर उखाड़ दिये और मध्य एशिया में घुस गया। किन्तु ७१५ ई० के बाद चीन का प्रताप फिर चमका और चीन-सम्राट् का आधिपत्य कास्पी सागर तक पहुँच गया। कश्मीर की राजगद्दी पर तब चन्द्रापीड बैठा ही था। उसने अपने दूत चीन-सम्राट् के पास भेजते हुए चीन के साथ सहयोग का वचन दिया। चीन ने कश्मीर काबुल गजनी आदि के भारतीय राज्यों को भी अपने साथ मिला कर मध्य एशिया में अरबों की बाढ़ रोकने को मजबूत राज-नीतिक दीवार खड़ी कर दी।

चीन की जो सेनाएँ मध्य एशिया में अरबों का सामना करने जातीं, तिब्बती अनेक बार उनका बाँयें से रास्ता काटने का यत्न करते। तिब्बत के राजा उत्तर और पच्छिम

स्व ह स्तो म म म हा रा जा धि रा ज श्री ह र्ष स्य

''स्वहस्तो मम महाराजाधिराजश्रीहर्षस्य'' —हर्षवर्धन का हस्ताक्षर; बाँसखेड़ा ताम्रपत्र पर से [लखनऊ संग्र०]

चित्र ०२

नालन्दामहाविहारीयार्यभिक्षुसंघस्य

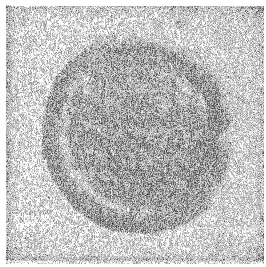

''नालन्दा महाविहार के आर्य भिक्षु-संघ की'' अर्थात् नालन्दा विद्यापीठ की मुहर. मूल परिमाण [भा० पु० वि०]

चित्र २३

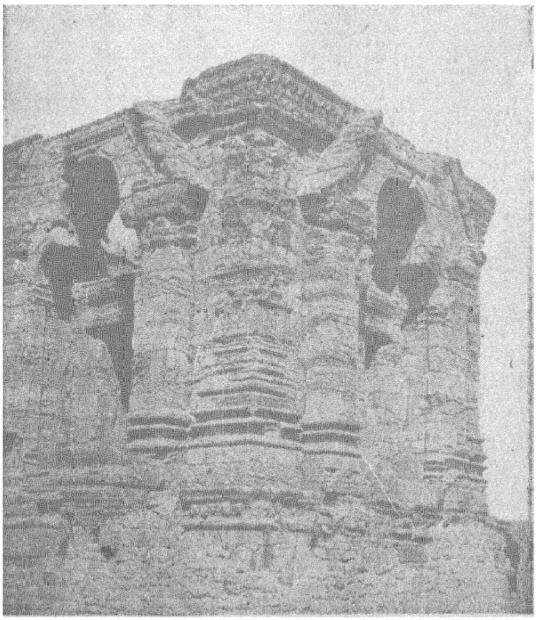

मटन तीर्थ (कश्मीर) में ललितादित्य के बनवाये मार्त्तण्ड मन्दिर के खँडहर। 'मटन' 'मार्त्तण्ड' का ही रूपान्तर है।

[भा० पु० वि०]

हिमालय पार सिन्ध नदी की दून* में तिब्बत से लगती है। उसी तरफ से तिब्बती लोग दरद देश के पूर्वी ज़िले बोलौर में (जिसका मुख्य नगर स्कर्दू है) घुस आये थे। चीनियों ने ७३६ ई० में गिल्गित से बोलौर पर चढ़ाई कर उन्हें वहाँ से निकाल दिया।

मुक्तापीड ने इसके बाद चीन-सम्राट् के पास अपने दूत भेज निवेदन किया कि मध्यदेश के सम्राट् यशोवर्मा के साथ मिल कर मैंने तिब्बतियों के दक्खिन और पच्छिम के सब रास्ते रोक रक्खे हैं, चीनी सेना उनपर फिर चढ़ाई करे

* पहाड़ में घिरे हुए मैदान को जो प्रायः किसी नदी का काँठा होता है, दून (संस्कृत में द्रोणी) कहते हैं। न केवल इस अर्थ में प्रत्युत मैदान में नदी के काँठे के अर्थ में भी हिन्दी के कुछ लेखक घाटी शब्द बर्त्तने लगे हैं, जो अज्ञानमूलक है। घाटी, घाट, घाटा शब्द हमारे देश की जनता पहाड़ की धार (=शृंखला) को जिन दर्रों से लाँघा जाता है, उनके लिए बर्त्तती है, जैसे अजमेर और पुष्कर के बीच की घाटी, मेवाड़ में हल्दी घाटी, गढ़वाल-कुमाऊँ से तिब्बत जाने के घाटे। बड़ा घाट = घाटा, छोटा घाट = घाटी। संस्कृत में घाट का शब्दार्थ है गर्दन की पीठ। दर्रा पहाड़ की धार की गर्दन सा लगता है। कांगड़े में घाट के अर्थ में जोत शब्द चलता है। जोत भी बैलों की गर्दन पर रक्खी जाती है।

तो दो लाख चीनी सैनिकों के लिए कश्मीर के महापद्म सरोवर (वुलर झील) पर उतारे और रसद का प्रबन्ध मैंने कर रक्खा है। किन्तु चीनी सेना कश्मीर नहीं आई।

कश्मीर के पड़ोस के सब पहाड़ी प्रदेश मुक्तापीड ने जीते। उसके अतिरिक्त मुलतान की सीमा तक समूचे पंजाब को अपने राज्य में मिलाया। पंजाब हर्षवर्धन के समय से कन्नौज साम्राज्य के अन्तर्गत था। मुक्तापीड ने उसे ले कर उस साम्राज्य का उत्तरपच्छिमी अंश काट लिया। उसके बाद उसने यशोवर्मा पर चढ़ाई कर उसे हराया और जमना से काली नदी तक की पहाड़ी भूमि देने को बाधित किया। यों काली नदी जो अब नेपाल राज्य और अलमोड़े के बीच सीमा है, तब मुक्तापीड और यशोवर्मा के राज्यों के बीच सीमा बनी। मुक्तापीड ने इन विजयों के बाद ललितादित्य पद धारण किया।

यशोवर्मा की हार के बाद इन दोनों राजाओं के बीच सन्धिपत्र लिखा जाने लगा तो मध्यदेश का सम्राट् होने से यशोवर्मा का नाम सन्धि के शीर्षक में पहले लिखा गया। इसपर कश्मीर के अमात्य मित्रशर्मा ने आपत्ति की कि हारने वाले का नाम पहले कैसे आ सकता है। तब

ललितादित्य का नाम ही पहले लिखा गया।

मध्य एशिया में चीनी शक्ति का बाँध आठवीं शताब्दी के मध्य में आ कर टूट गया। ७५१ ई० में अरबों ने तुर्कों के साथ मिल समरकन्द पर चीनी सेना को बुरी तरह हराया। उसी युद्ध के चीनी क़ैदियों से अरबों ने काग़ज़ बनाना सीखा और फिर अरबों से सभ्य जगत् के दूसरे लोगों ने। तुर्क भी मध्य एशिया में वापिस आ गये और मुस्लिम बनने लगे। मध्य एशिया तभी से तुर्किस्तान बनने लगा।

ललितादित्य ने लगभग ७३० से ७६५ ई० तक राज्य किया। चीनी सेनाओं के मध्य एशिया से हट जाने के बाद भी वह कश्मीर के उत्तर और पच्छिम के देशों पर चढ़ाइयाँ करता रहा, जिससे तिब्बती, तुर्क और अरब उस तरफ से भारत की सीमाओं से दूर रहें। उसने काबुल राज्य को जिसमें पच्छिमी गन्धार भी सम्मिलित था, अपनी रक्षा में लिया; हिमालय पार कर सिन्ध नदी के तट पर तिब्बतियों को हराया; दरद और तुखार प्रदेशों पर भी चढ़ाइयाँ कीं। किसी उत्तरी चढ़ाई में ही उसकी मृत्यु हुई।

७६६ ई० में खिलाफत की राजधानी दमिश्क से बगदाद आ गई।

४. चमार की कुटिया

कश्मीर के राजा चन्द्रापीड ने त्रिभुवनस्वामी का बड़ा मन्दिर बनाने का निश्चय किया। उसके 'नवकर्माधिकारियों' (इमारती महकमे के अधिकारियों) ने ज़मीन चुन कर नीवें डाल दीं। एक चमार की कुटिया उस ज़मीन में पड़ती थी। वे अधिकारी उसकी कुटिया पर जाते तो वह उन्हें ज़मीन रस्सियों से मापने भी न देता। अधिकारियों ने आ कर राजा से शिकायत की।

राजा ने उन्हीं को दोष देते हुए कहा—"तुमने उससे पूछे बिना यह नवकर्म क्यों शुरू किया? धिक्कार है तुम्हारी आगा-पीछा देखे बिना काम करने की आदत को! अब या तो निर्माण रोक दो या दूसरी जगह करो। दूसरे की भूमि छीन कर हम अपने चरित में कलंक क्यों लगायें?

हम जो अच्छे बुरे को देखने वाले हैं वही यदि धर्मविरुद्ध कार्य करने लगें तो न्याय-मार्ग से कौन चले ?"

इसपर मन्त्रिपरिषद् ने चमार से फिर आग्रह किया तो चमार ने अपना दूत राजा की सेवा में भेजा। दूत ने राजा से निवेदन किया कि वह चमार बाहरी दरबार में आपके दर्शन करना चाहता है। अगले दिन राजा ने उसे बाहरी दरबार में दर्शन दिये। राजा ने उसे देख कर कहा—"हमारे पुण्य कार्य में तुम्हीं विघ्न बने हो? वह घर तुम्हें बहुत रम्य लगता है तो उससे अधिक धन ले लो न।"

चमार बोला—"राजन्, यदि मैं अपना आशय ठीक-ठीक कहूँ तो सच्चे न्यायाधीश होते हुए आपको बुरा न मानना चाहिए। आपके ये दरबारी हमारे इस संलाप पर क्षुब्ध क्यों हो रहे हैं? संसार में पैदा होने वाले प्रत्येक जन्तु का देह का नाज़ुक चोला 'मैं' और 'मेरा' इन भावनाओं (अहंता और ममता) की खूँटियों पर ही टँगा रहता है। आपके लिए जैसी यह महलों से हँसती राजधानी है, मेरे लिए वैसी ही मेरी वह कुटिया है जिसके झरोखे घड़ों के मुँहों से बन्द किये जाते हैं। जो जन्म

से ले कर माँ की तरह मेरे सुख-दुःख की साक्षी है, उस मड़ैया का ढहाया जाना मुझसे देखा नहीं जाता। इतने पर भी यदि आप मेरे घर पर आ कर मुझसे उसे माँगेंगे तो सदाचार के अनुरोध से मेरे लिए उसे देना ही उचित होगा।"

राजा चन्द्रापीड ने तब उस चमार के घर पर जा कर उस कुटिया की भिक्षा माँगी, और उसके दे देने पर उसे बहुत पुरस्कार दिया।

———

५. धर्मपाल, जयापीड, नाहड़देव, गोविन्द

उज्जैन पर अरबों की चढ़ाई के शीघ्र बाद यशोवर्मा की मृत्यु हुई (लग० ७४० ई०)। उसके पीछे मगध-मिथिला-बंगाल पर कन्नौज साम्राज्य का नियन्त्रण रखने वाला कोई न हुआ। कुछ वर्षों के लिए वहाँ "मछलियों की सी दशा" हो गई, अर्थात् पूरी अराजकता मच गई। बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है, और उसे भी अपने से बड़ी का डर रहता है। ठीक यही दशा मनुष्यों के उन समूहों में होती है जिनमें दृढ राजशक्ति न रहे। उस "मछलियों की सी दशा को हटाने के लिए प्रजा ने श्री गोपाल के हाथ राज्य-लक्ष्मी सौंप दी"—अर्थात् उसे अपना राजा चुन लिया (लग० ७४३ ई०)। गोपाल योग्य राजा था। उसने समूचे मगध मिथिला और बंगाल

में सुव्यवस्था ला दी।

गोपाल और उसके वंशज बौद्ध पन्थ के अनुयायी रहे। गोपाल के ज़माने में नालन्दा महाविहार से दार्शनिक शान्तरक्षित निमन्त्रण पा कर तिब्बत गया, और वहाँ उसने बौद्ध ग्रन्थों के तिब्बती अनुवाद करवाये। उस युग में लोगों का विश्वास मन्त्र-तन्त्र जादू-टोने में बहुत बढ़ गया था और बौद्ध पन्थ में भी वैसी बातें बहुत आ गई थीं। पच्छिमी गन्धार में स्वात (सुवास्तु) नदी की दून का उपरला अंश उड्डीयान कहलाता था और वह मन्त्र-जादू के अभ्यास का सब से बड़ा स्थान था। आचार्य शान्तरक्षित के दार्शनिक विचार साधारण तिब्बतियों पर वैसा प्रभाव न डाल सकते थे जैसा किसी मन्त्र-पण्डित का जादू डालता। इसलिए उसने उड्डीयान के राजा इन्द्रभूति के पुत्र पद्मसम्भव को जो बड़ा मन्त्र-पण्डित या 'सिद्ध' प्रसिद्ध था, तिब्बत बुलवाया। उन दोनों ने मिल कर तिब्बत में बौद्ध मार्ग का प्रचार किया। शान्तरक्षित और पद्मसम्भव का नाम तिब्बत के लोग अब भी बड़ी श्रद्धा से याद करते हैं और पद्मसम्भव को अब भी गुरु पद्मसम्भव कहते हैं।

उत्तर भारत के पूरबी भाग में जैसे गोपाल का राजवंश

खड़ा हुआ वैसे ही पच्छिमी भाग में भी, जिसे कन्नौज का सम्राट् अरब आक्रमण से बचा न सका था, नया राजवंश खड़ा हुआ। इस वंश का पहला पुरुष था नागभट और उसकी राजधानी भिन्नमाल। नागभट ने सिन्ध के अरब शासकों का सफल सामना करके ख्याति पाई थी। उसके पुरखा किसी राजा के प्रतिहार अर्थात् द्वारपाल थे, इस कारण उसके वंश का नाम प्रतिहार चल गया।

साम्राज्य के दो किनारों पर जब ये परिवर्तन हुए, तभी कन्नौज में भी राजवंश बदल गया। नये राजवंश का स्थापक वज्रायुध हर्ष शीलादित्य के सेनापति भंडि का वंशज था।

इसी समय महाराष्ट्र-कर्णाटक के चालुक्य राजा से उसके सामन्त दन्तिदुर्ग ने राज्य छीन कर वहाँ भी नये राजवंश की नींव डाली। दन्तिदुर्ग पहले उसी राज्य में राष्ट्रकूट अर्थात् किसी प्रान्त का शासक था। पर अब से राष्ट्रकूट उसका और उसके वंश का उपनाम बन गया। 'राष्ट्रकूट' का हिन्दी रूप राठोड है।

गोपाल का बेटा धर्मपाल, जिसने लग० ७७० से लग० ८०९ ई० तक राज्य किया, पिता के समान योग्य हुआ।

कश्मीर का राजा जयापीड, जो ललितादित्य का पोता था, उसका प्रायः समकालिक था।

जयापीड की बचपन में ही चाल-ढाल देख कर ललितादित्य ने आशा लगाई थी कि वह मेरे समान होगा। ललितादित्य के बाद उसके दो बेटों ने आठ बरस और फिर जयापीड के दो बड़े भाइयों ने चार बरस राज्य किया था। उस अवधि में कश्मीर का शासन ललितादित्य के ज़माने सा नहीं रहा; फिर भी कश्मीर का साम्राज्य प्रायः ज्यों का त्यों बना रहा था।

राज्य पाने के शीघ्र बाद जयापीड पूरब की तरफ़ अपना राज्य और बढ़ाने की दृष्टि से सेना ले कर निकला। ललितादित्य के पोते के नेतृत्व में आती कश्मीर की सेना को रोकने की हिम्मत कन्नौज के राजा वज्रायुध को नहीं हुई। पर जयापीड के दूर चले आने पर पीछे उसके साले जज्ज ने कश्मीर का राज्य हथिया लिया। तब जयापीड की सेना के बहुतेरे सैनिक अपने घरों की चिन्ता के कारण दिन दिन उसका साथ छोड़ लौटने लगे। प्रयाग के आगे पहुँच कर जयापीड ने सेना को स्वदेश लौटने की अनुज्ञा कहला भेजी और स्वयं एक रात भेस बदल कर अकेला छावनी में

से निकल पड़ा !

वह घूमता घामता पुण्ड्रवर्धन (पुर्णिया-राजशाही) पहुँचा, जहाँ गौड राजा (धर्मपाल) की तरफ़ से जयन्त नामक सरदार शासन कर रहा था। गोपाल और धर्मपाल के ३४-३५ बरस के लगातार सुराज्य से वहाँ के पुरवासी समृद्ध दशा में थे। उनकी समृद्धि देख जयापीड प्रसन्न हुआ। उस युग में जनता के विनोद के लिए मन्दिरों में नाच कराने की प्रथा साधारण थी। एक रात जयापीड लास्य नाच देखने के लिए कार्त्तिकेय के मन्दिर में गया। वहाँ नर्त्तकी कमला की दृष्टि उसपर पड़ी। वह उसे कोई विशिष्ट पुरुष जान नाच के बाद अपने घर लिवा ले आई। कमला ने उसे प्रेमजाल में फँसाना चाहा, पर उसने एक श्लोक गुनगुनाते हुए कहा कि अपनी जिगीषा (विजय-भावना) को पूरा किये बिना मनस्वी के लिए स्त्री की चिन्ता कैसी। तब कमला ने जाना कि उसने उसे जैसा पुरुष समझा था वह उससे कहीं बड़ा है।

एक रात कमला ने उससे कहा कि यहाँ एक सिंह का त्रास फैला हुआ है, राजा और राजपुत्र भी रात को उसके डर के मारे बाहर नहीं निकलते। कमला से जंगल

का रास्ता पूछ समझ कर अगली सन्ध्या को जयापीड उस जंगल में जा बैठा। रात को उसने सिंह को उधर से जाते देखा तो उसकी ओर बढ़ कर उसे ललकारा। सिंह ने झपट कर जयापीड की आगे बढ़ी हुई बाँह मुँह में दबोच ली। जयापीड ने उस बाँह से उसे उठाते हुए दूसरे हाथ से छुरी चला कर उसका पेट चीर दिया। कोहनी पर पट्टी बाँध वह आधी रात को कमला के घर आ सोया।

सिंह के मारे जाने की बात अगले दिन प्रातः सारे नगर में फैल गई। राजा जयन्त स्वयं उसे देखने गया। सिंह का जबड़ा खोल कर देखा गया तो उसके दाँत में फँसा सोने का बाजूबन्द मिला जिसपर नाम खुदा था—जयापीड ! जयापीड अपनी सेना को छोड़ अकेला घूमता फिरता है यह बात तब उत्तर भारत के सब प्रदेशों में फैली हुई थी। पुण्ड्रवर्धन के लोग यह जान कर कि वह हमारे नगर में ही है, एकाएक आतंकित होने लगे। राजा जयन्त ने उन्हें समझाया कि यह डरने की बात तो नहीं, प्रसन्न होने की बात है। लोगों ने तब उसी दिन कमला के घर में जयापीड को खोज निकाला। जयन्त उसे अपने घर लिवा ले गया और अपनी एकमात्र सन्तान कल्याण-

देवी ब्याह दी।

जयापीड की बची-खुची सेना को उसका अमात्य देवशर्मा परदेश में किसी तरह सँभाले बैठा था। यह देवशर्मा ललितादित्य के अमात्य मित्रशर्मा का बेटा था। जयापीड का पता मिलने पर वह उसे पुण्ड्रवर्धन से लिवा ले गया। कमला और कल्याणदेवी भी उसके साथ साथ गईं। अपनी सेना द्वारा कन्नौज के राजा से कुछ छेड़छाड़ करते हुए वे अपने देश वापिस लौटे। श्रीनगर के दक्खिन पच्छिम शुष्कलेत्र† गाँव पर साले बहनोई का बहुत दिन तक युद्ध हुआ।

कश्मीर के ग्रामीण लोग जो जज्ज के प्रशासन में तीन बरस से दुखी थे, धड़ाधड़ अपने राजा की सेना में भरती होने लगे। एक गाँव के भंगी श्रीदेव ने माँ से कहा—माँ मुझे खाना बाँध दे, मैं राजा की सहायता को जाता हूँ। माँ ने उसे हँसते हँसते रोटियाँ दीं तो उसने चलते हुए कहा—देखना, मैं जज्ज को मार के न आऊँ तो! अपने गाँव वालों के दल के साथ युद्धभूमि में पहुँ-

---

† शुष्कलेत्र को अब हुखलित्र कहते हैं।

चने पर वह पूछता फिरता--जज्ज कौन सा है ? योद्धाओं ने तब उसे दूर से दिखाया कि वह देखो जो घोड़े पर चढ़ा चढ़ा सोने की सुराही से पानी पी रहा है वही जज्ज है। श्रीदेव ने उसी क्षण अपनी गुलेल घुमाते हुए पत्थर फेंका और कहा—यह लो जज्ज मार दिया ! श्रीदेव का निशाना अचूक था। पत्थर की चोट खा कर लहूलुहान मुँह के साथ जज्ज घोड़े से गिरा और ज़मीन पर तड़पने लगा। उसके साथी उसे मरता देख भाग गये।

तीन बरस बाद राज्य वापिस पा कर जयापीड ने देश का शासन सुधारा और दूर दूर से विद्वानों को बुला कर कश्मीर में आश्रय दिया। कुछ अरसे बाद वह फिर बड़ी सेना ले कर पूरब के विजय को निकला। हिमालय प्रदेश में अनेक छोटे छोटे राज्य थे। इन्हीं में से एक के राजा भीमसेन से वह पहले उलझ गया। जयापीड अपने दादा से बढ़ कर वीर और पराक्रमी था, पर उसका पराक्रम व्यक्तिगत साहस के कार्यों में प्रकट होता था। उसकी वीरता को सन्तुलन और समझदारी के वे पुट न मिले थे जिनसे भावित होने पर ही वह बड़ी सेनाओं का सफल संचालन और साम्राज्यों की स्थापना और सँभाल

कर सकती है।

भीमसेन के एक पहाड़ी गढ़ को हथियाने के लिए जयापीड कुछ साथियों के साथ साधुओं का भेस धरे चुपचाप उसमें जा घुसा। जज्ज का भाई सिद्ध अरसे से उसी गढ़ में रहता था। उसने अपने बहनोई को पहचान कर भीमसेन को पता दे दिया। जयापीड कैद कर लिया गया। बाहर उसकी सेना फिर भाग्य के और देवशर्मा के हवाले रह गई।

तभी भीमसेन के राज्य में 'स्पर्शसञ्चारी' (छूत से फैलने वाला) घातक 'लूता'-रोग फैला। लूता-रोगी को दूर कर देने या उससे दूर हट जाने के सिवाय बचाव का कोई उपाय न माना जाता था। जयापीड ने देखा यह छुटकारे का रास्ता भाग्य से मेरे हाथ आया है। उसने पित्त उभाड़ने वाली वस्तुएँ खा कर बुखार चढ़ा लिया और नागफणी का दूध मल कर देह पर फुड़ियाँ कर लीं। शत्रु ने यह मान कर कि उसे लूता-रोग हो गया है, उसे अपने देश से दूर निकाल दिया। जयापीड ने उसके बाद भीमसेन का वह गढ़ आसानी से जीत लिया।

आगे चल कर जयापीड का मुकाबला नेपाल के

"सयाने और वीर राजा" वरदेव से हुआ, जिसका छेड़ का नाम कश्मीरियों ने अरमुडि* रक्खा। जयापीड अरमुडि के देश में घुसा तो अरमुडि पीछे हटता गया। जयापीड उसके सामन्त राजाओं को जीतता आगे बढ़ता गया। "अरमुडि कभी डुबकी लगा कर गुप्त हो जाता, कभी एकाएक दिखाई दे जाता।" अन्त में जयापीड की सेना एक नदी के किनारे पहुँची। उस पार अरमुडि अपनी सेना सहित छत्र धारण किये प्रकट हुआ। जयापीड ने देखा नदी में घुटने भर पानी है और सेना सहित उसमें उतर पड़ा। बीच में पहुँचने पर नदी में ज्वार सी आई प्रतीत हुई और उसकी थाह न मिलने लगी। जयापीड की सेना बह कर नष्ट हुई, वह स्वयं भी दूर बह गया। "एक सेना की चिल्लाहट और दूसरी के गर्जन ने नदी के घोष के साथ मिल कर दिशाओं को गुँजा दिया।" चुस्त शत्रु ने पखालों के साथ तैयार खड़े अपने सैनिकों को नदी में उतार

* स्व० आचार्य काशीप्रसाद जायसवाल ने नेपाल-इतिहास का संशोधन कर ठक्कुरी वंश के राजा वरदेव का जो काल नियत किया है उसके अनुसार वह जयापीड का समकालिक होता है। "अरमुडि" स्पष्ट ही 'वरदेव' का बिगाड़ा हुआ रूप है।

जयापीड को पकड़वा मँगाया* और काली गंडक के किनारे पत्थर के ऊँचे महल में पक्के पहरे में रख दिया! जयापीड को इस बार उस बन्धन से निकलने का कोई रास्ता दिखाई न दिया।

उस दशा में देवशर्मा ने अरमुडि से दूतों द्वारा बात चलाई। उसने कहला भेजा कि जयापीड का राज्य और कोश मैं आपको दिला सकता हूँ। दूतों द्वारा ठहराव होने पर देवशर्मा चुनी सेना ले कर काली गंडक के बाँयें तट तक आया और सेना को वहाँ ठहरा स्वयं राजा अरमुडि की सेवा में पहुँचा। दोनों ने शपथ ले कर ठहराव पक्का किया।

देवशर्मा ने कहा--जयापीड ने अपना धन सेना

* जानवर की पूरी खाल को हवा भर के फुला कर तूँबे की तरह उसका सहारा ले कर नदी में तैरने का रिवाज हिमालय में साधारण है। वैसी खाल को संस्कृत में दृति और हिन्दी में पखाल कहते हैं। हरद्वार के पास-पड़ोस में रोभ नामक हिरन की खाल इस काम लाई जाती है। दो या चार रोभों पर खाट बाँध कर तमेड़ बना ली जाती है, जिसके ऊपर न तैर सकने वालों को बिठा दिया जाता है, और एक या दो तैराक उस तमेड़ के साथ लटकते उसे छाती से ठेलते हुए धारा के पार उतार देते हैं।

की छावनियों में ही रक्खा हुआ है जिसे या तो वह स्वयं या उसके विशिष्ट साथी ही जानते हैं। मैं उसे यह कह कर फ़ुसलाना चाहता हूँ कि बड़ी रकम दे कर तुम्हारा छुटकारा हो सकता है और उससे पूछूँगा कि किस किस को उस धरोहर का पता है। इसीलिए मैं इकट्ठी सेना को नहीं लाया, क्योंकि सेना के बीच से धरोहर वालों को नहीं पकड़ा जा सकता। एक एक सैनिक को बुला कर यहाँ बाँधा जायगा, बाकी इस बारे में कुछ न जानेंगे इसलिए भड़केंगे नहीं।

यों अरमुडि की अनुज्ञा पा कर देवशर्मा अपने राजा से अकेले में मिला। अपने दुःख को मन में दबाते हुए उसने उससे पूछा—तुम अपना वह तेज तो नहीं हार बैठे हो जिसकी भींत पर ही साहस के आलेख्य खींचने की कल्पना हो सकती है? इस खिड़की से कूद कर नदी के उस पार जा सकोगे? उस पार तुम्हारी अपनी सेना है।

जयापीड ने कहा—यह काम पखाल बिना नहीं हो सकता, और पखाल भी इतने ऊँचे से गिर कर फट जायगी। इसलिए यह उपाय तो यहाँ नहीं चलेगा। अवमानित

हुआ हुआ मैं अपने अपकारी को कुचले बिना शरीर छोड़ना ठीक नहीं मानता।

देवशर्मा ने कुछ क्षण सोच कर कहा--किसी प्रकार दो घड़ी के लिए इस कोठरी से बाहर चले जाओ, लौट कर आओगे तो उपाय तैयार पाओगे।

जयापीड तब टट्टी वाली कोठरी में चला गया। दो घड़ी बाद लौटा तो देखा कि देवशर्मा गले में कपड़ा बाँधे ज़मीन पर मरा पड़ा है, उस कपड़े के किनारे वह अपने नखों से निकाले लहू से लिख गया है—मेरी लाश ताज़ी होने से फटेगी नहीं, अपनी जाँघों पर मैंने कस कर पगड़ी बाँध दी है, उसमें टाँगें फँसा कर नदी में कूदो! जयापीड के मन में विस्मय और स्नेह उमड़ पड़ा। पर वह स्थान भावों में बहने का नहीं था। अपने मित्र के शव पर चढ़ कर वह गहरे में कूद गया और नदी के पार हो गया। तब अपनी सेना से मिल कर उसने नेपाल राज्य को उजाड़ दिया।

जयापीड फिर कश्मीर पहुँचा। वहाँ फिर उसने प्रजा का सुख बढ़ाया। किन्तु उसके साहस-कार्यों और कैदें भोगने की अवधि में साम्राज्य के बंद टूट चुके या

ढीले पड़ गये थे। ७८० ई० में तिब्बतियों ने खोतन के विजय वंश के राज्य को सदा के लिए मिटा दिया था। भारत की पच्छिमी सीमा पर अरब साम्राज्य की बागडोर इसी समय सब से योग्य खलीफा हारूँल-रशीद के हाथ आई थी। उसके गद्दी पर बैठते ही ७८६ ई० में ईरान से अरब सेना ने फिर काबुल पर चढ़ाई की। काबुल पर अपनी इस अन्तिम चढ़ाई में भी अरब काबुल नगर के बाहर एक बौद्ध विहार को लूटने से अधिक कुछ न कर सके, तो भी ८६ वर्ष बाद उनके फिर काबुल पर चढ़ाई करने से यह प्रकट हुआ कि ललितादित्य ने भारत की उत्तर-पच्छिमी सीमा पर जो बाँध बनाया था वह टूट चुका था।

इस दशा में गौड के योग्य राजा धर्मपाल ने कन्नौज साम्राज्य को अपने हाथ में कर के उसकी शक्ति को पुनःसंघटित और पुनर्जीवित किया। धर्मपाल ने कन्नौज के राजा वज्रायुध के उत्तराधिकारी इन्द्रायुध को गद्दी से उतार उसकी जगह चक्रायुध को बैठाया। चक्रायुध के अभिषेक पर कन्नौज के सब पुराने सामन्त धर्मपाल के प्रताप से प्रेरित हो कर इकट्ठे हुए और उन्होंने चक्रायुध को सम्राट् स्वीकार किया। इन सामन्तों में अवन्ति, गन्धार,

कीर और मद्र के राजा या प्रतिनिधि भी थे। कीर पंजाब का कांगड़ा ज़िला था जो कश्मीर के निकट पूर्व है। मद्र और गन्धार कश्मीर के दक्खिन हैं। ये प्रदेश ललितादित्य के राज्य में थे, पर उसके बाद सम्भवतः जयापीड के कैद होने पर राज्य से निकल गये थे। धर्मपाल ने अपने पराक्रम और नीति से उन्हें फिर कन्नौज साम्राज्य के आधिपत्य में किया। वह साम्राज्य भी यों धर्मपाल के हाथ की कठपुतली बन गया। नेपाल को भी धर्मपाल ने अपने राज्य में मिला लिया।

किन्तु भिन्नमाल के राजा नागभट के भाई के पोते वत्सराज प्रतिहार ने धर्मपाल को चुनौती दी और उसपर चढ़ाई कर उसे हराया। वत्सराज प्रकटतः अवन्ति को अपने अधिकार में लेना चाहता था, और चूँकि धर्मपाल ने अवन्ति को कन्नौज साम्राज्य में रखने का यत्न किया, इसलिए वत्सराज उससे लड़ा। दूसरी तरफ़ राष्ट्रकूट राजा ध्रुव धारावर्ष भी अवन्ति पर दाँत लगाये हुए था। प्रतिहार और राष्ट्रकूट राजाओं का लाट (सूरत-भरुच प्रदेश) के लिए भी झगड़ा था। ध्रुव ने वत्सराज को हराया, फिर धर्मपाल पर भी चढ़ाई की और गंगा-जमना-दोआब

के भीतर भागते हुए गौड राजा का छत्र छीन लिया। इन युद्धों से ध्रुव का अधिकार दक्षिण कोशल (छत्तीसगढ़) और लाट पर सुनिश्चित हो गया। दक्खिन तरफ उसने काञ्ची को भी जीता था।

वत्सराज प्रतिहार का बेटा नागभट २य राजस्थान की ख्यातों में नाहड़देव नाम से प्रसिद्ध है। ध्रुव के दो बेटों— स्तम्भ और गोविन्द— में घरेलू युद्ध हुआ। उससे अपने दाहिने पहलू से निश्चिन्त हो नाहड़देव ने चक्रायुध और धर्मपाल दोनों को हराया और कन्नौज राजधानी पर अधिकार कर लिया। पर घरेलू युद्ध में जीतने और अपने राज्य में स्थापित होने के बाद गोविन्द प्रभूतवर्ष ने उत्तर भारत पर चढ़ाई की, और नाहड़देव को हार दी। धर्मपाल और चक्रायुध को भी उसके आगे झुकना पड़ा। गोविन्द ने दक्षिण कोशल के उत्तर तरफ जबलपुर प्रदेश और मालवे (अवन्ति) पर भी अधिकार कर लिया। पूरब और दक्खिन तरफ उसका राज्य उड़ीसा को लेते हुए रामेश्वरम् तक था। यों समूचा दक्खिन भारत और मध्य मेखला का बहुत सा अंश उसके अधीन था, और वह अपने समय में भारत का मुख्य राजा था। उसने ७९४

से ८१५ ई० तक राज्य किया।

यशोवर्मा के ललितादित्य से हारने के बाद पूरब, पच्छिम और दक्खिन के राज्यों के बीच जो तिकोना संघर्ष शुरू हुआ, उसका यों ६० बरस में यह परिणाम निकला कि दक्खिन भारत में मजबूत साम्राज्य उठ खड़ा हुआ, जिसके सामने कन्नौज का दुर्बल साम्राज्य था जिसे बाएँ और दाहिने पहलुओं पर प्रबल प्रतिहार और पाल राज्य थामे रहते।

जयापीड अपने प्रशासन (लग० ७७६–८०७ ई०) के पिछले अंश में "दादा वाले मार्ग को छोड़ कर पिता वाले रास्ते पर चल पड़ा", अर्थात् प्रजापीडक बन गया। उसने अपने 'कायस्थों' (छोटे राज्याधिकारियों) के कहने में आ कर प्रजा पर अनेक नये कर आदि लगा कर उसे परेशान किया। "कश्मीर के राजाओं का कायस्थों (राजकीय भृत्यों) के कहने में लग कर" प्रजा को पीडित करना "तब से आरम्भ हुआ।"

६. देवपाल, अमोघवर्ष, मिहिर भोज

गौड राजा धर्मपाल का विवाह राष्ट्रकूट परबल की बेटी रण्णादेवी से हुआ था। उनका पुत्र देवपाल भी अपने दादा और पिता की तरह योग्य हुआ। उसने प्राग्ज्योतिष और उत्कल (उत्तरपूर्वी उड़ीसा) को जीत कर समूचे पूर्वी मण्डल को एक राज्य बना लिया।

सुवर्णद्वीप (सुमात्रा-जावा) के शैलेन्द्रवंशी राजा बालपुत्रदेववर्मा के कहने से देवपाल ने नालन्दा में एक और विहार बनवाया। सुवर्णद्वीप की राजधानी श्रीविजय थी। सुवर्णद्वीप और मगध-गौड के राज्यों में उस समय घनिष्ठ सम्पर्क था। अफगान विद्वान् वीरदेव की तब समूचे भारत और सुवर्णद्वीप आदि राज्यों में भी बड़ी ख्याति थी। वीरदेव नगरहार (=आधुनिक निंग्रहार=पेशावर

और काबुल के बीच जलालाबाद के चौगिर्द प्रदेश) का रहने वाला था। उसके पिता का नाम इन्द्रगुप्त और माँ का नाम रज्जेका था। नगरहार में वेदों की शिक्षा पाने के बाद वीरदेव ने पेशावर के कनिष्क महाविहार में आ कर बौद्ध ग्रन्थों की शिक्षा पाई थी। वह बुद्धगया की यात्रा करने आया और वहाँ से अपने 'सहदेशी' (अर्थात् अफगान) भिक्षुओं और विद्यार्थियों से मिलने नालन्दा आया। राजा देवपाल ने वहाँ उपस्थित हो कर उससे प्रार्थना की कि आप यहीं रह कर "नालन्दा का परिपालन" करें अर्थात् प्रधान अध्यापक का कार्य करें। वीरदेव राजा की प्रार्थना मान वहीं रह गया।

दक्खिन भारत में गोविन्द प्रभूतवर्ष के २१ बरस के प्रशासन के बाद उसके बेटे शर्व अमोघवर्ष ने ६३ बरस (८१५–८७७ ई०) और फिर शर्व के बेटे कृष्ण अकालवर्ष ने ३४ बरस (८७७–९११ ई०) राज्य किया। ११७ वर्षों के उन तीन प्रशासनों में साम्राज्य की सीमाएँ प्रायः वही रहीं, लगातार सुशासन चलता रहा और समृद्धि और शान्ति बनी रही। अमोघवर्ष ने मान्यखेट (=गुलबरगा ज़िले में आधुनिक मालखेड) नगरी को अपनी राजधानी

बनाया। देवपाल को उत्कल जीतने के लिए अमोघवर्ष से विन्ध्य में भिड़ना पड़ा था।

भिन्नमाल के नाहड़देव का पोता मिहिर भोज हुआ। ८३६ ई० में राजगद्दी पाने पर उसने भारत के नक्शे को एकाएक पलट दिया। उसने कन्नौज पर चढ़ाई कर उसे जीत लिया और भिन्नमाल के बजाय अपनी राजधानी बना लिया। अमोघवर्ष और देवपाल दोनों यह देखते रह गये और उसे रोक न सके।

हिमालय के जो प्रदेश ललितादित्य ने कन्नौज साम्राज्य से छीन लिये थे उन्हें वापिस लेते हुए मिहिर भोज ने ठेठ कश्मीर से अपनी सीमा लगा दी। तभी कश्मीर का कर्कोट राजवंश समाप्त हो कर उत्पल वंश स्थापित हुआ (८५५ ई०)। कश्मीर और गन्धार के पहाड़ों से मुलतान-सिन्ध की सीमा तक और वहाँ से समूचे राजस्थान कच्छ और सुराष्ट्र को भीतर लेते हुए पच्छिमी समुद्र तक नये कन्नौज साम्राज्य की पच्छिमी सीमा रही।

पूरब तरफ मिहिर भोज ने देवपाल की मृत्यु के बाद उसके बेटे नारायणपाल से मगध मिथिला और पुण्ड्रवर्धन (पुर्णिया + उत्तरी बंगाल) छीन लिये। पालों का राज्य

तब केवल राढ देश (दक्खिनपच्छिमी बंगाल) और दक्खिनी बंगाल में रह गया। पूरब की तरफ़ जीते हुए

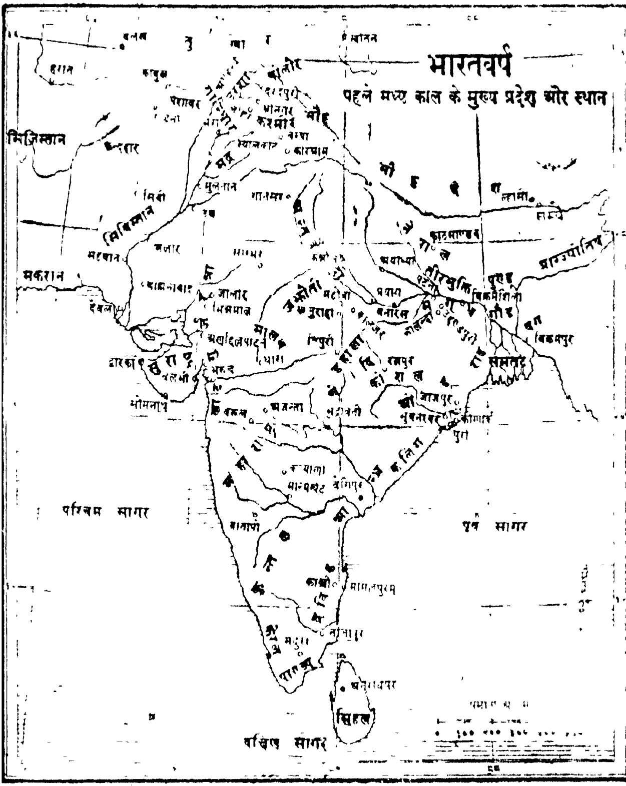

नक्शा—९

इस देश के द्वार पर मिहिर भोज ने अपने नाम से भोजपुर

बसाया, जो अब भी शाहाबाद (आरा) ज़िले में एक गाँव रूप में विद्यमान है। बनारस से आरा और गोरखपुर से मोतिहारी तक बिहार के समूचे पच्छिमी अंचल की बोली उसी भोजपुर के नाम से भोजपुरी कहलाती है।

मिहिर भोज के ५५ बरस और उसके बेटे महेन्द्रपाल के १७ बरस के प्रशासन में कन्नौज साम्राज्य का प्रताप फिर पहले की तरह बना रहा। ये राजा चाहते और यत्न करते तो मुलतान-सिन्ध को भी जीत सकते थे, जहाँ अब खिलाफ़त के क्षीण हो जाने पर छोटे मोटे अरब और स्थानीय सरदार राज करते थे। पर जब कभी कन्नौज की सेना मुलतान की तरफ बढ़ी, वहाँ के मुस्लिम शासकों ने धमकी दी कि आगे बढ़ोगे तो हम सूर्य-मन्दिर को तोड़ देंगे, और उस धमकी से कन्नौज की सेना लौट गई! इसके अतिरिक्त कन्नौज के प्रतिहार सम्राटों के डर से सिंध के शासकों ने अब दक्खिन के राष्ट्रकूट सम्राटों से मैत्री कर ली। मिहिर भोज और महेन्द्रपाल अमोघवर्ष और अकालवर्ष के समकालिक थे। यों इस शताब्दी में हर्ष शीलादित्य और सत्याश्रय पुलिकेशी के ज़माने की तरह उत्तर और दक्खिन भारत में दो साम्राज्य बने रहे।

मिहिर भोज से मार खा कर जैसे कश्मीर का कर्कोट वंश मिट गया, वैसे ही राष्ट्रकूट सम्राटों से बार बार पिट कर काञ्ची का पुराना पल्लव वंश अब समाप्त हुआ। चोळ सरदार आदित्य ने पल्लव राजा अपराजित को पराजित कर अपना स्वतंत्र राज्य खड़ा किया (लग० ८८० ई०)। आदित्य के बेटे परान्तक ने समूचे तमिळ देश को उसके अन्तर्गत करके वहाँ बड़ा व्यवस्थित शासन चलाया।

खलीफों का साम्राज्य, जो आठवीं शताब्दी में स्पेन से मध्य एशिया तक फैल गया था, मिहिर भोज और अमोघवर्ष के ज़माने में टुकड़े टुकड़े हो गया। खिलाफत छोटी सी रियासत रूप में राजधानी बगदाद के चौगिर्द रह गई। बाकी साम्राज्य के स्थान पर अनेक छोटे राज्य उठे, जो अरब सरदारों या मुसलमान बने हुए ईरानियों के थे। उनमें से एक खुरासान (उत्तरपूर्वी ईरान, मशहद के चौगिर्द प्रदेश) और बुखारा के अमीरों का था।

काबुल के राजाओं की अब से अरबों के बजाय इस राज्य से मुठभेड़ रहने लगी। ८७० ई० में बुखारा के एक सेनापति याकूब-ए-लैस ने काबुल का गढ़ ले लिया।

काबुल नगर और उसके प्रदेश पर वह अधिकार न कर सका, तो भी काबुल का राजा अपनी राजधानी वहाँ से हटा कर सिन्ध नदी के दाहिने तट पर उदभाण्डपुर ले आया। उदभाण्डपुर अब उन्द या ओहिन्द कहलाता है। सिन्ध नदी का पुराना घाट वहीं था, और वह आजकल के घाट अटक से १६ मील उत्तर है।

ओहिन्द में कुछ ही बरस बाद ब्राह्मण मन्त्री लल्लिय ने राज्य हथिया कर अपना राजवंश चलाया। लल्लिय और उसके वंशज काबुल के पुराने राजाओं की तरह शाहि कहलाये।

कश्मीर की प्रजा लगभग ८०० ई० से लगातार कु-शासन से पीडित रही थी। उत्पल वंश के पहले राजा अवन्तिवर्मा के अत्यन्त न्यायपूर्ण और दृढ सुशासन (८५५–८८३ ई०) में उसे शान्ति और समृद्धि देखने को मिली।

अवन्तिवर्मा का राज्य ठेठ कश्मीर दून तक परिमित था। उसके बेटे शंकरवर्मा ने अपने प्रशासन (८८३–९०२ ई०) में कश्मीर के दक्खिन की तराई दार्वाभिसार (जम्मू, भिम्भर, राजौरी, पुंच) को जीता, जम्मू के

दक्खिन स्यालकोट प्रदेश को लिया, अपनी पूर्वी सीमा पर मिहिर भोज से और पच्छिम तरफ लल्लिय शाहि से टक्कर ली। युद्धों का खर्चा निकालने के लिए उसने अपने राज्य के अनेक मन्दिरों की जायदादें ज़ब्त कीं। युद्ध में रसद पहुँचाने की खातिर उसने प्रजा से भार ढोने की बेगार लेने की प्रथा भी चलाई।

कश्मीर के पच्छिम लगा हुआ, वितस्ता (जेहलम) और सिन्ध नदियों के बीच का, पहाड़ी प्रदेश उरशा कहलाता था। वह अब रश या हज़ारा कहलाता है। शंकरवर्मा ने उरशा पर चढ़ाई की। उसी में उसकी मृत्यु हुई। उसकी रानी सुगन्धा ने सेना को कश्मीर वापिस पहुँचाया और सीमा पर पहुँचने तक राजा की मृत्यु की बात छिपाये रक्खी। अपने बालक बेटे को राजा बना कर सुगन्धा उसके नाम पर कुछ वर्ष शासन चलाती रही।

७. सुय्य अन्नपति

श्रीनगर (कश्मीर) के रथमार्ग पर सुय्या नाम की भंगिन झाड़ू लगा रही थी कि उसे मिट्टी का एक कोरा ढक्कन-दार मटका दिखाई दिया। उसने ढक्कन उठाया तो देखती है कि उसके भीतर कमल की पँखुड़ियों सी आँखों वाला बच्चा अपने हाथ की अंगुलियाँ चूसता लेटा पड़ा है! वह सोचने लगी—किस अभागिन माँ ने इस सुन्दर को यहाँ छोड़ दिया है! सोचते सोचते स्नेह से उसके स्तनों में दूध उमड़ आया। बच्चे को ले जा कर उसने पाला पोसा। उस बच्चे का नाम सुय्य हुआ।

सुय्य खूब बुद्धिमान् निकला। उसने अच्छी शिक्षा पा ली और बड़ा होने पर किसी गृहस्थ के यहाँ बच्चों का अध्यापक लग गया। अपनी विशद (स्पष्टदर्शिनी) प्रज्ञा

के लिए उसकी प्रसिद्धि हो गई। शिक्षित लोग गोष्ठियों में उसके चारों तरफ इकट्ठे होने लगे। उनकी बातचीत में कश्मीर के जलप्लावनों से होने वाले कष्ट की चर्चा प्रायः आती। सुय्य तब कहता—मैं इसका उपाय जानता हूँ, पर मेरे हाथ में साधन नहीं हैं सो क्या करूँ।

वह उत्पल वंश के पहले राजा अवन्तिवर्मा का युग था। अवन्तिवर्मा अपनी प्रजा के हालचाल का पूरा पता रखता और गुणियों की तलाश में रहता था। उसने अपने चारों से सुय्य की बात सुनी और उसे अपने पास बुलवाया। सुय्य ने राजा के सामने भी बिना झिझक के कहा—मैं बाढ़ों का उपाय जानता हूँ, पर मेरे हाथ में साधन नहीं हैं, क्या करूँ। राजा के दरबारियों ने कहा यह झक्की है, पर राजा ने उसे परीक्षण के लिए जितने धन की आवश्यकता हो देने का निश्चय किया।

कश्मीर प्रदेश हिमालय की गोद में बसा है। हिमालय की बड़ी धार उसका ढासना है। उस धार का पच्छिमी सिरा नंगा पर्वत है जहाँ से वह दक्खिनपूरब दिशा में आड़ी चली गई है। उसकी दूसरी बड़ी चोटी नुनकुन से प्रायः ४० मील पहले उसमें बड़ा उतार है। वह ज़ोजीला अर्थात्

ज़ोजी घाटा है।

ज़ोजीला के पास से हिमालय की बड़ी धार ने अपनी एक बाँहीं पच्छिम तरफ़ और एक दक्खिन तरफ़ बढ़ा दी है। पच्छिम वाली बाँही अब हरमुक कहलाती है; उसका पुराना नाम हरमुकुट है। हरमुक शृङ्खला और बड़ी हिमालय शृङ्खला के बीच कृष्णगंगा नदी पूरब से पच्छिम बहती है। हरमुक के पच्छिमी छोर से एक शृङ्खला दक्खिन और फिर पूरब-पच्छिम फैली हुई है। वह काजनाग पर्वत है। कृष्णगंगा भी हरमुक के पच्छिमी छोर से दक्खिन-पच्छिम घूम कर काजनाग को अपने बायें रखते चली आई है।

ज़ोजीला के पास से जो शृङ्खला दक्खिन गई है उसके आरम्भ में अमरनाथ तीर्थ है। इसलिए हम उसे अमरनाथ पर्वत कहते हैं। वह वितस्ता या जेहलम और चनाब के बीच पनढाल का काम करता है। अमरनाथ पर्वत अपने दक्खिनी छोर से ज़रा पच्छिम घूम कर ढल गया है। उसके आगे उस जैसा एक और पर्वत पहले पच्छिम फिर उत्तर और पच्छिम जाता हुआ काजनाग के पास तक जा निकलता है। इस पर्वत का पुराना नाम पंचालधारा

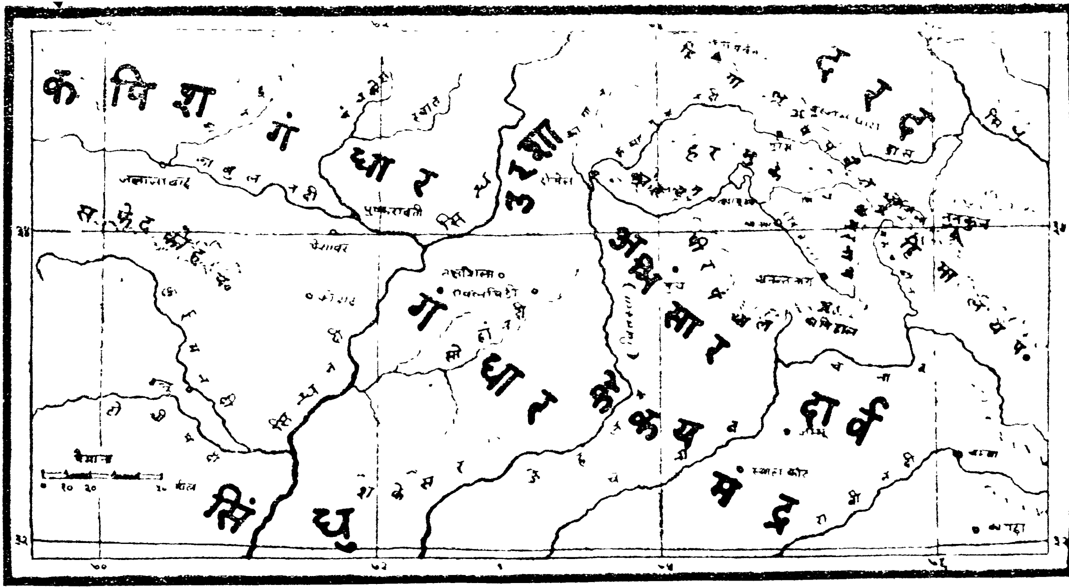

नक्शा—१०

कश्मीर और उसके पड़ोस के प्राचीन देश

है। अब कश्मीरी इसे पीर-पंचाल और पंजाबी पीर-पंजाल कहते हैं।

हरमुक, अमरनाथ, पीर-पंचाल और काजनाग पर्वत लघु हिमालय शृङ्खला के हैं। इनके बीच घिरा हुआ ८४ मील लम्बा २५ मील चौड़ा और समुद्र सतह से पाँच हजार फुट ऊँचा मैदान वह ठेठ कश्मीर है जिसके विषय में फ़ारसी कवि ने कहा है—

अगर फ़िरदौस बर रूए ज़मीन अस्त
हमीनस्तो हमीनस्तो हमीनस्त !

—यदि पृथ्वी की सतह पर कहीं स्वर्ग है तो यहीं है, यहीं है, यहीं है! वह पृथ्वी का स्वर्ग वितस्ता नदी की दून है।

वितस्ता इस मैदान के दक्खिनपूरबी छोर से अर्थात् अमरनाथ शृङ्खला के किनारे से निकल कर प्रायः ६० मील उत्तरपच्छिम बहती हुई महापद्म सरोवर में मिलती है। महापद्म को अब वोलुर कहते हैं। फिर उसमें से निकल कर कुछ दूर दक्खिनपच्छिम बहने के बाद वह पीर-पंचाल और काजनाग की ढाँगों से घिर जाती है। वे दोनों पर्वत जहाँ उसे घेरते हैं वह कश्मीर दून का एक किनारा और

पच्छिम से उसमें घुसने का द्वार है। वहीं वराहमूल (बारामूला) की बस्ती है। वोलुर के ५४ मील ऊपर से बारामूला के तीन मील नीचे तक वितस्ता में नावें चलती हैं। उसके आगे उसकी दून तंग हो कर खोह बन गई है और उसकी धारा में जगह जगह भदभदें† (प्रपात) हैं। वराहमूल के तीन मील पच्छिम जिस तंग दर्रे में से वितस्ता गुज़री है उसे यक्षदर कहते थे।

वहाँ से वह कुछ दूर दक्खिनपच्छिम फिर उत्तरपच्छिम बह कर कृष्णगंगा से मिलती है। उनके संगम का स्थान दोमेल कहलाता है और अब वहाँ मुज़फ्फराबाद की बस्ती है। कृष्णगंगा से मेल होने के बाद वितस्ता एकाएक बड़ा तीखा कोण बना कर दक्खिन घूमती और प्रायः सौ मील दक्खिन चली जाती है। उसका वह दक्खिनी प्रवाह कश्मीर और अभिसार को उरशा और गन्धार से अलग करता है।

कश्मीर के चारों तरफ के पहाड़ों का पानी अनेक छोटी धाराएँ वितस्ता में लाती हैं। उनमें विशिष्ट महत्त्व

† पत्थरों या चट्टानों की रुकावट से या सतह के एकाएक गिरने से नदी का पानी जहाँ भदभद करके गिरता है उसे मालवे में भदभदा कहते हैं।

की ज़ोजीला के पास से निकलने वाली सिन्ध नाम की नदी है जो वहाँ से पच्छिम बहती हुई श्रीनगर के नौ मील नीचे वितस्ता में मिलती है। इस छोटी सिन्धु का नाम उत्तरगंगा भी था।

वितस्ता के बहाव से सूचित है कि कश्मीर दून का ढाल दक्खिनपूरब से उत्तरपच्छिम है। पर वह ढाल बहुत हलका है, इससे वितस्ता की धारा का वेग कश्मीर में बहुत मन्द है और इसी से उसमें एक छोर से दूसरे छोर तक नावें चलती हैं। इसी कारण जब कभी पहाड़ों से पानी कुछ अधिक आ जाय, कश्मीर में बाढ़ आ जाती और उसके बहुत से खेत और गाँव डूब जाते या दलदल बन जाते।

पुराने समय से कश्मीर दून के दो विभाग किये जाते रहे हैं। श्रीनगर के ऊपर अर्थात् दक्खिनपूरब वाला अंश मडवराज्य और श्रीनगर के नीचे अर्थात् उत्तरपच्छिम वाला अंश क्रमराज्य कहलाता था। उन दोनों नामों के घिसे हुए रूप मराज़ और कमराज़ अब भी उन जिलों के नाम हैं।

हाँ तो सुय्य को राजा अवन्तिवर्मा ने अपने कोश

से यथेष्ट धन लेने को कह दिया तो वह दीनारों† के भरे हुए बहुत से गगरे ले कर तुरन्त नाव पर चढ़ मडवराज्य गया। वहाँ नन्दक गाँव में जो गहरे पानी में डूबा था एक गगरा फेंक कर जल्दी से लौट आया। राजा के दर-बारियों ने कहा यह सचमुच झक्की है, पर राजा ने उसके कार्य को अन्त तक देखना तय किया।

सुय्य श्रीनगर वापिस आ नाव से सीधा क्रमराज्य चला गया। यक्षदर पहुँच कर उसने अंजलियाँ भर भर कर दीनार पानी में उलीच डाले। यक्षदर का नाम तब से दीनार-गल अर्थात् दीनारों वाली गली या दर्रा हो गया। 'दीनारगल' घिस कर 'द्याँरगुल' बना जो अब तक उसका नाम है। वहाँ दोनों तरफ के पहाड़ों से लुढ़क कर आई हुई शिलाओं से वितस्ता का पानी रुक कर सब तरफ फैला हुआ था। दुर्भिक्ष के मारे हुए ग्रामीणों ने दीनार ढूँढते हुए उन शिलाओं को निकाल फेंका। वितस्ता तब वहाँ खुल कर बहने लगी। दो तीन दिन में सुय्य ने आस-पास फैले हुए पानी को युक्ति से खींच कर निकाल दिया।

† दीनार सोने का सिक्का था।

तब उसने मजदूरों के दल से वितस्ता के बीचोंबीच पत्थर का 'सेतुबन्ध' (नदी के आरपार बाँध) बनवाया। नदी तब उतरी हुई थी। उसका कुल पानी उस सेतुबन्ध से सुय्य ने सप्ताह भर रोके रक्खा। इस बीच उसने सेतु के नीचे वाले नदी के पाट को साफ करवाया और लुढ़क कर आने वाले पत्थरों को रोकने के लिए दोनों तरफ बाँध बनवा दिये। सप्ताह बाद उसने वह सेतुबन्ध उखाड़ दिया। "वितस्ता का रुका पानी बह जाने के बाद जगह जगह पानी से छुटी कीचड़ से सनी काली काली भूमि निकल आई—उस कीचड़ के बीच मछलियाँ फड़फड़ाती थीं।" यक्षदर पर नदी का रास्ता साफ हो जाने से सारे कश्मीर में पानी की सतह उतर गई और बाढ़ का बहुत सा पानी निकल गया।

इसके बाद सुय्य ने यह देखना शुरू किया कि बाढ़ के समय कहाँ कहाँ से नदी का पानी छुटता है। उसने वहाँ वहाँ नदी का पाट गहरा और किनारे पक्के करवाये।

इस प्रसंग में सुय्य ने अनेक छोटी नदियों के रास्ते भी बदले और सुधारे, पर सब से अद्भुत कार्य यह किया

कि वितस्ता और सिन्धु का संगम जहाँ होता था वहाँ से उसे हटा कर दो मील उत्तरपच्छिम कर दिया। वितस्ता जहाँ महापद्म में मिलती थी, बाढ़ के समय नदी और सरोवर दोनों का पानी उसके पास दूर तक फैल जाने से बहुत सी ज़मीन पर दलदल बनी रहती थी। सुय्य ने देखा कि वितस्ता को सब से सीधे रास्ते से महापद्म में उस जगह जा कर गिरना चाहिए जहाँ महापद्म की गहराई अधिकतम है और किनारे ऊँचे हैं, अर्थात् जहाँ बाढ़ों का फ़ालतू पानी आसानी से समा सकता है। इसके लिए वितस्ता और सिन्धु का संगम बदलना भी आवश्यक था। सुय्य ने वे दोनों काम कर दिये। इसके अतिरिक्त महापद्म के ऊपर सात योजन (४२ मील) तक वितस्ता के रास्ते को बाँध कर उसने महापद्म को भी नियंत्रित कर दिया। यों उस सरोवर से वितस्ता जहाँ से निकलती थी वहाँ से उसका निकलना भी तेज़ी से होने लगा। महापद्म के दक्खिन जिस ज़मीन पर वितस्ता की बाढ़ दक्खिन से फैला करती थी वह खेती के लिए निकल आई।

सुय्य के तीन सौ बरस पीछे कश्मीर के इतिहास-लेखक कल्हण ने लिखा कि नदियों के पुराने पाटों के

किनारों के पेड़ों पर नाव बाँधने की रस्सियों के चिह्नों से अब भी पता चलता है कि यहाँ कोई नदी थी। हमारे ज़माने तक पेड़ों पर के वे चिह्न तो नहीं बचे, पर वितस्ता और सिन्धु के पुराने संगम के चिह्न विद्यमान हैं। और सुय्य ने उन दोनों नदियों का जहाँ मिलना नियत किया था वे अब भी वहीं मिलती हैं।

नन्दक गाँव में सुय्य ने दीनारों से भरा जो गगरा अथाह जल में छोड़ा था, वह उस गाँव के पानी से निकल आने पर सूखे पर पाया गया।

यों जो बहुत सी नई ज़मीनें निकल आईं, उनपर बाढ़ों का पानी रोकने को चारों तरफ़ पाळें बना कर सुय्य ने नये गाँव बसाये। उन गाँवों के चारों तरफ़ पाळें होने से उनकी शकल कुण्डलों की सी लगती थी, इसलिए वे कुंडल कहलाये। कश्मीर में ऐसे बहुत से गाँव अब भी हैं जिनके नामों का अन्त 'कुण्डल' से होता है।

इसके बाद कश्मीर के गाँवों से नमूने की मिट्टियाँ मँगा कर उन्हें सींच कर सुय्य ने यह जाँच की कि कौन सी मिट्टी कितनी अवधि में सूखती है। उसके अनुसार उसने यह नियत किया कि किस गाँव को कितना

पानी मिलना चाहिए।

सुय्य के सुधारों से कश्मीर में अनाज की उपज इतनी बढ़ गई कि उसके सामने ही अनाज का दाम पहले से १/५ रह गया। जनता ने सुय्य को अन्नपति की उपाधि दी।

वितस्ता महापद्म सरोवर से जहाँ से निकलती है, वहाँ सुय्य ने सुय्यपुर बसाया। वह बस्ती अब भी सोपुर कहलाती और हमें उसकी याद दिलाती है।

———

८. मुञ्ज, महमूद, राजेन्द्र, भोज

कन्नौज राज्य में महेन्द्रपाल का उत्तराधिकारी उसका बेटा महीपाल हुआ और महाराष्ट्र में कृष्ण अकालवर्ष का उत्तराधिकारी उसका बेटा इन्द्र नित्यवर्ष। न जाने किस बात पर मध्यदेश और महाराष्ट्र के सम्राट ९१६ ई० में फिर भिड़े। इन्द्र नित्यवर्ष राजधानी कन्नौज तक पहुँच गया और उसे उजाड़ा। उसके एक सामन्त ने प्रयाग तक महीपाल का पीछा किया। यों ८३६ ई० से कन्नौज साम्राज्य के जिस गौरव-युग का आरम्भ हुआ था, वह अस्सी बरस बाद समाप्त हो गया। ९१६ ई० से उसकी घटती कला आरम्भ हुई और उसके दूर के प्रदेशों में अनेक राज्य स्वतंत्र हो उठे।

जमना के दक्खिन से विदर्भ और दक्षिण कोशल

तक पुराना चेदि देश था जिसे अब हम बुन्देलखंड कहते हैं। उसमें इस समय दो राज्य उठ खड़े हुए। दक्खिन वाला जिसकी राजधानी त्रिपुरी (जबलपुर के पास) थी, चेदि ही कहलाता रहा। उत्तर वाले का नाम इस युग में जेजाक-भुक्ति या जझौती रहा। उसकी राजधानी पहले महोबा (हमीरपुर ज़िले में), फिर खजुराहो रही। चेदि का राज-वंश कलचुरि और जझौती का चन्देल कहलाता।

इनके पच्छिम अवन्ति में जो अब मालव लोगों के वहाँ तक फैल जाने से मालवा भी कहलाने लगा, परमार राजवंश स्थापित हुआ। उसकी राजधानी धारा (= आधुनिक धार) थी। गुजरात में मूलराज सोलंकी ने अणहिलवाड़ा को राजधानी बना कर अपना राजवंश स्थापित किया। दक्खिनी राजस्थान का पूरबी और पच्छिमी अंश प्रायः इन दोनों राज्यों के अधीन रहता। उत्तरी राजस्थान में, शाकम्भरी (साँभर) राजधानी में, चाहमान या चौहान राजवंश खड़ा हुआ।

बिहार-बंगाल में पाल-वंशी राजा ने अपने पुरखों के राज्य पर फिर अधिकार कर लिया। ओहिन्द के राजाओं ने पंजाब के बड़े भाग को भी अपने राज्य में ले लिया।

इन सब राज्यों के बीच कन्नौज का साम्राज्य भी पहले से छोटी परिधि में बना रहा।

मालवे के पहले स्वतन्त्र राजा सीयक या श्रीहर्ष ने ९७२ ई० में राष्ट्रकूटों की राजधानी मान्यखेट पर धावा मारा। तब राष्ट्रकूट राज्य का भी अन्त हुआ, और तैलप चालुक्य ने महाराष्ट्र-कर्णाटक में अपने राजवंश की स्थापना की। इस नये चालुक्य राज्य की राजधानी कल्याणी (हैदराबाद राज्य में बिदर के लगभग ४५ मील पच्छिम) थी।

भारत के मध्य भाग में जब यह नया राजनीतिक नक्शा बन रहा था, तभी उत्तरपच्छिमी सीमा पर भी बड़ा परिवर्त्तन हो रहा था। भूतपूर्व खिलाफत के क्षेत्र में जो अरब और ईरानी सल्तनतें खड़ी हुई थीं, उनमें लगभग ९५० ई० से तुर्क सरदार मुख्य होने लगे। यों कहना चाहिए कि ६५० ई० के लगभग तुर्कों को चीनियों ने जो मध्य एशिया से उखाड़ा था उसके तीन शताब्दी बाद तुर्क अब फिर उठे।

अफगानिस्तान के ठीक मध्य भाग में जहाँ काबुल, हेलमन्द और वंक्षु नदियों के बीच पनढाल है, वहाँ बामियाँ

प्रदेश है। बुखारा-खुरासान की सल्तनत ने इस समय बामियाँ को ले कर उसके दक्खिनपूरब बढ़ते हुए गज़नी को भी जीत लिया। काबुल दून का हिन्दू राज्य यों उत्तर पच्छिम और दक्खिन तीन तरफ़ से घिर गया। गज़नी का वह नया जीता प्रदेश बुखारा सल्तनत के हाजीब अर्थात् प्रतिहार अलप-तगीन नामक तुर्क को जागीर रूप में मिला। अलप-तगीन का उत्तराधिकारी उसका दामाद सुबुक-तगीन हुआ। कहते हैं जिस अन्तिम सासानी राजा यज़्दगुर्द से अरबों ने ईरान का राज्य लिया था, उसकी एक लड़की किसी तुर्क सरदार को ब्याही थी, और सुबुक उसी का वंशज था। इस युग के तुर्कों में इस प्रकार ईरानियों, शकों, ऋषिकों, तुखारों आदि का खून मिल चुका था, और इस कारण वे रंग-रूप में पुराने हूणों जैसे नहीं रहे थे।

सुबुक-तगीन गज़नी के उत्तर और पूरब कई गढ़ ले कर अपना राज्य बढ़ाने लगा। वे गढ़ काबुल-ओहिन्द के शाहि जयपाल के थे। जयपाल ने जवाब में गज़नी प्रदेश पर चढ़ाई की। कई दिन कड़ी लड़ाई चलती रही। जयपाल की सेना वहाँ एक पहाड़ी सोते का पानी पीती थी। सुबुक के तुर्कों ने जीतने का उपाय न देख उस सोते में शराब

मुंज की मृत्यु के समय भोज निरा बच्चा था, इसलिए सिन्धुराज गद्दी पर बैठा। सिन्धुराज का भी गुजरात के चालुक्य राजा से युद्ध चला, जिसके अन्त में वह मारा गया (लग० १००९ ई०)। तब भोज धारा की गद्दी पर बैठा। परमारों चालुक्यों का वह द्वन्द्व इसके बाद भी अस्थिवैर बन कर चलता रहा।

महाराष्ट्र-कर्णाटक के चालुक्यों का जहाँ उत्तर तरफ धारा के परमारों से मुकाबला था, वहाँ दक्खिन तरफ चोळ राज्य से सामना था। परान्तक चोळ का वंशज राजराज चोळ सुबुक-तगीन मुञ्ज और सिन्धुराज का समकालिक था। उसने केरल के समुद्री बेड़े को हरा कर पाण्ड्य और केरल राज्यों को पूरी तरह वश में किया और आन्ध्र और कलिंग पर भी अधिपत्य जमाया। तब कर्णाटक पर चढ़ाई कर तैलप के बेटे सत्याश्रय चालुक्य को चार बरस के युद्ध

भाई मुंज के हाथ सौंप गया और मुंज ने राज्य-लोभ से अपने उस भतीजे को मारना चाहा, इत्यादि। इस बात को पीछे अन्य लेखकों ने भी उद्धृत किया। समकालिक ग्रन्थों और परमार वंश के लेखों से सिद्ध हुआ है कि यह बात तथ्य से ठीक उलटी है।

के बाद पूरी तरह हराया। राजराज ने सिंहल को भी जीता तथा लकदिव और मालदिव को अपने राज्य में मिला लिया। उसकी राजधानी तांजोर थी।

सुबुक-तगीन की जागीर ९९७ ई० में उसके बेटे महमूद को मिली। तभी बुखारा-खुरासान का राज्य भी टूट गया और उसका पच्छिमी अंश—अर्थात् वंक्षु नदी और कास्पी सागर के बीच का प्रदेश, खुरासान और गज़नी—महमूद को मिला।

अपने नये राज्य पर अधिकार जमाते हुए महमूद सीस्तान को काबू करने में लगा था जब उसे खबर मिली कि जयपाल फिर युद्ध की तैयारी कर रहा है। महमूद जयपाल को अवसर दिये बिना एकाएक पेशावर पर जा टूटा (१००१ ई०)। जयपाल अपने बेटे आनन्दपाल और अनेक सरदारों सहित पकड़ा गया। पेशावर और ओहिन्द अर्थात् सिन्ध नदी तक का सारा प्रदेश महमूद के हाथ लगा। आनन्दपाल को ओल रख उसने जयपाल को जाने दिया, पर जयपाल को अपनी हारों से इतनी ग्लानि हुई कि वह आग में कूद कर जल मरा। उस युग के भारत में इस प्रकार पानी या आग में कूद कर शरीर त्याग देने

की प्रथा काफ़ी चलती थी।

जयपाल के जीवन त्याग देने पर महमूद ने आनन्द-पाल को छोड़ दिया। आनन्दपाल ने नमक की पहाड़ियों में भेरा नगरी को अपनी राजधानी बनाया।

ओहिन्द राज्य के दक्खिन तरफ़ आजकल के डेरा-गाज़ीखाँ ज़िले और उसके पूरब प्रदेश में भाटियों का राज्य था। पंजाब की पाँचों नदियों का पानी जहाँ सतलज में आ चुकता है, वहाँ से सिन्ध में मिलने तक वह पंजनद कहलाती है। उसके पड़ोस में उच्च नामक नगरी भाटी राज्य की राजधानी थी। शाहि राज्य से काबुल-पेशावर-ओहिन्द प्रदेश छिन जाने पर सिन्ध नदी के पच्छिम तरफ़ यदि कोई हिन्दू इलाका बचा था तो वह उच्च के भाटी राज्य का ही था। महमूद ने उसपर चढ़ाई की। गढ़ के बाहर तीन दिन की गहरी लड़ाई के बाद राजा विजयराय मारा गया। पर लौटते समय महमूद की सेना बुरी तरह सताई गई और स्वयं महमूद की "कीमती जान" भी मुश्किल से बची।

भाटी राज्य से लगा हुआ मुलतान-सिन्ध का राज्य था जिसके शासक मुसलमान थे। महमूद ने उसपर चढाई

करने को आनन्दपाल के राज्य में से लाँघना चाहा। आनन्दपाल के अनुमति न देने पर वह उसके राज्य में घुस उसे उजाड़ने लगा। कई मुठभेड़ों में हारने के बाद आनन्दपाल कश्मीर भाग गया। मुलतान का शासक भी यह समाचार पा कर भाग गया और महमूद ने उसके राज्य पर अधिकार कर लिया।

आनन्दपाल ने फिर कन्नौज जझौती आदि राज्यों से सहायता मँगा कर युद्ध की तैयारी की। महमूद भी बड़ी सेना के साथ फिर आया। अटक के पास छछ के मैदान में दोनों सेनाएँ ४० दिन आमने-सामने एक-दूसरे की ताक में पड़ी रहीं। अन्त में उस प्रदेश के वीर गक्खड़ों ने जो आनन्दपाल की सेना में थे, तुर्कों पर हमले शुरू किये। महमूद की सेना के पैर उखड़ गये और वह पीछे हटने की सोचने लगा। तभी आनन्दपाल का हाथी बिगड़ कर भागा और उसकी सेना उसे राजा के हारने का संकेत समझ भाग खड़ी हुई! इस हार से हिन्दू राज्यों की कमर टूट गई। शाहि राज्य के पूरब लगा हुआ कीर (काँगड़ा) राज्य था। उसके शासकों को ख्याल भी न था कि उस-पर भी हमला होगा। महमूद छछ की जीत के बाद एका-

एक उसपर जा टूटा और वहाँ नगरकोट के मन्दिर को लूटा।

इतनी चोटें लगने के बावजूद भी पंजाब का शाहि राज्य टूटा या झुका न था। महमूद की एक और चढ़ाई में आनन्दपाल मारा गया और उसके बेटे त्रिलोचनपाल ने वार्षिक कर देना स्वीकार किया।

पर इससे भी उसे चार ही बरस शान्ति मिली। १०१४ ई० में महमूद ने फिर चढ़ाई की। अटक और जेहलम के बीच पहाड़ी प्रदेश में तौसी नदी के किनारे लड़ाई हुई। कश्मीर के राजा संग्रामराज ने अपने सेनानायक तुङ्ग को त्रिलोचन शाहि की सहायता को भेजा था। महमूद ने अपनी कुछ सेना तौसी के पार भेजी, जिसे तुंग ने मार भगाया। अपनी उस जीत के सिलसिले में तुंग आगे बढ़ने लगा तो त्रिलोचनपाल ने उसे रोका और बहुत सावधानी से चलने को कहा, क्योंकि शाहियों को अब तक तुर्कों के "छल-युद्ध" का अनुभव हो चुका था। पर तुंग ने उतनी सावधानी न की। वह नदी पार कर गया और महमूद की बड़ी सेना से हारा। त्रिलोचन कश्मीर भाग गया, महमूद ने पंजाब दखल कर लिया। यों तीन पीढ़ियों के संघर्ष के

बाद काबुल-गन्धार का शाहि राज्य मिट गया।

मुलतान-पंजाब ले कर महमूद ने आगे बढ़ना शुरू किया। उसने थानेसर पर धावा मारा। फिर एक लाख सेना के साथ ठेठ हिन्दुस्तान पर चढ़ाई कर मथुरा और कन्नौज को लूटा (१०१८ ई०)। कन्नौज का राजा राज्यपाल गंगा पार भाग गया था। महमूद की एक और चढ़ाई होने पर उसने वार्षिक कर देना मान लिया। उसके यों कायरता-पूर्वक झुक जाने पर उसे दण्ड देने के लिए जझौती के युवराज विद्याधर ने अपने ग्वालियर के सामन्त के साथ उसपर चढ़ाई की और उसे मार डाला। तब महमूद ने एक चढ़ाई जझौती पर भी की।

उत्तर भारत के महमूद के पड़ोसी राज्यों में से एक कश्मीर ही बचा था जिसने उससे मार न खाई थी। १०२१ ई० में महमूद ने उसपर चढ़ाई की। पर कश्मीर की दक्खिनी सीमा पर के लोहर नामक पहाड़ी गढ़ को वह ले न सका, और वहाँ से हार कर लौटा।

दो बरस बाद महमूद ने गुजरात के सोलंकी (चालुक्य) राज्य पर चढ़ाई की। मुलतान से तीस हज़ार ऊँटों पर रसद-पानी ले कर दक्खिनपच्छिमी राजस्थान में जालोर

को लूटते हुए वह अणहिलवाड़े की तरफ बढ़ा। राजा भीम सोलंकी कच्छ भाग गया। महमूद तब सुराष्ट्र में घुसा और समुद्र के किनारे सोमनाथ पर पहुँच कर उस नगर और मन्दिर को लूटा और उसके शिवलिंग को तोड़ डाला। महमूद की सेना जब सोमनाथ की ओर बढ़ी आ रही थी, और गुजरात का राजा कच्छ भाग गया था, तब कहते हैं वहाँ के लोग उसी शिवलिंग से प्रार्थना कर रहे थे कि हमें बचाओ !

सोमनाथ का वह मन्दिर तब काठ का था और उसे धारा के राजा भोज ने कुछ ही पहले बनवाया था। महमूद को खबर मिली कि मालवे का परमारदेव अर्थात् राजा भोज लौटते हुए उसका रास्ता काट कर आक्रमण करेगा। इसलिए वह राजस्थान के बजाय कच्छ और सिन्ध के रास्ते लौटा। सिन्ध नदी के नाविक जाटों ने उसकी सेना को बहुत सताया और रास्ते में बहुत सी लूट छीन ली। उन्हें दण्ड देने के लिए महमूद ने एक और चढ़ाई की, जो भारत पर उसकी अन्तिम चढ़ाई थी। १०२९ ई० में महमूद की मृत्यु हुई।

महमूद के साथियों ने पेशावर में ही दक्खिन भारत

के कर्णाट सैनिकों की ख्याति सुनी थी। राजराज चोळ के बेटे राजेन्द्र की सेना मुख्यतः कर्णाट सैनिकों की ही थी। राजेन्द्र युवराज रूप में अपने पिता का अनेक युद्धों और कार्यों में हाथ बँटा चुका था। उसके राज-पद पाने (१०१२ ई०) के दो बरस बाद ही महमूद ने शाहि राज्य को मिटाया और फिर उत्तर भारत के दूसरे राज्यों का पराभव किया था। राजेन्द्र चोळ ने अपनी कर्णाट सेना के बल पर उन राज्यों की सहायता करने की नहीं सोची। वह उसी अवधि में पूर्वी भारत को दबाता रहा।

उड़ीसा और दक्षिण कोशल को जीत कर राजेन्द्र ने बङ्गाल पर चढ़ाई की। उस चढ़ाई में वह पूर्वी बङ्गाल तक पहुँच गया। बङ्गाल का राजा महीपाल उससे केवल अपनी राजधानी गौड को बचा सका। राजेन्द्र बङ्गाल पर उसी समय चढ़ाई किये हुए था जब महमूद सोमनाथ पर चढ़ा था। गङ्गा तक विजय करने के उपलक्ष्य में राजेन्द्र ने गंगैकोण्ड पद धारण किया।

राजराज और राजेन्द्र चोळ की जल-सेना भी बहुत प्रबल थी। पर राजेन्द्र ने अपनी जल-सेना द्वारा सुराष्ट्र को महमूद से बचाने का यत्न नहीं किया। उसने उससे

"श्रीविजय के राजा और कटाह (=क्रा की स्थलग्रीवा और मलाया प्रायद्वीप) के स्वामी" शैलेन्द्र संग्रामविजयोत्तुंगवर्मा पर चढ़ाई कर उसके समूचे राज्य को जीत लिया। उस समय शैलेन्द्रों के राज्य में दक्खिनी बरमा, क्रा और मलाया, सुमात्रा और पच्छिमी जावा सम्मिलित थे।

हमने देखा है कि सातवाहन और गुप्त युगों के भारत में एक तरफ मध्य एशिया के सीता-तारीम काँठे तथा दूसरी तरफ सुवर्णभूमि प्रायद्वीप के देश तथा सुमात्रा जावा आदि द्वीप भी गिने जाते थे। ७५१ ई० में समरकन्द पर चीनियों की हार होने के बाद से सीता-तारीम काँठों के भारतीय राज्यों पर तुर्कों की बाढ़ आने लगी, जिससे वे महमूद के युग में आ कर मिट गये। पर भारत का पूरबी विस्तार इस युग तक भी पहले की तरह बना हुआ था। ठीक सुबुक-तगीन और महमूद के समय में ही उसका एक किनारा भी काटा जाने लगा।

चम्पा राज्य की उत्तरी सीमा पर तोङकिङ प्रदेश में आनामी या व्येतनामी लोग रहते थे जो कई शताब्दी पहले मध्य चीन तट से वहाँ आये थे। ९८० ई० में चीन से स्वतन्त्र हो कर उन्होंने चम्पा पर धावे मारना शुरू किया।

चम्पा का उत्तरी प्रान्त अमरावती था। उसी में उसकी राजधानी इन्द्रपुर थी। जैसे १००१ ई० में शाहि आनन्द-पाल को अपनी राजधानी ओहिन्द से भेरा हटानी पड़ी, वैसे ही १००० ई० में चम्पा के राजा सिंहवर्मा को अपनी राजधानी इन्द्रपुर से हटा कर अमरावती के दक्खिन विजय प्रान्त में लानी पड़ी थी।

यों राजा भोज का यह ज़माना ऐसा था जब भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक प्रायः सब राज्य झकझोरे जा रहे थे। जैसे महाभारत युद्ध के युग में भारत के प्रायः सभी राज्य युद्ध की लपेट में आ गये थे, अथवा जैसे शक-विक्रमा-दित्य-युग में जातियों की उथलपुथल ने उत्तरपूर्वी एशिया से महाराष्ट्र और मगध तक सब देशों को हिला दिया था, वैसे ही राजा भोज के युग में हुआ। पर इस युग में तीन अलग अलग आँधियाँ भारत के उत्तरपच्छिमी, दक्खिनी और पूरबी किनारों से उठीं जो दूसरे राज्यों को डाँवाँडोल करती रहीं।

भारत के ठीक मध्य के केवल दो राज्य—एक मालवा दूसरा चेदि—ऐसे थे जो इन आँधियों के बहाव के रास्तों में न आये। महमूद और राजेन्द्र के बाद ये दोनों भारत में

मुख्य हो गये ।

महमूद के बाद उसके वंशजों से ईरान और मध्य एशिया के प्रदेश छिन गये । उनका राज्य अफगानिस्तान पंजाब और सिन्ध में अर्थात् भारत की सीमा के अन्दर ही रह गया । फिर भी पंजाब से वे गंगा-काँठे और राजस्थान पर छापे मारते थे । मालवे के भोज और चेदि के कर्ण ने उनसे पंजाब के पूरब और दक्खिन के प्रान्तों को उबारा । कुरुक्षेत्र और कीर (कांगड़ा) प्रदेश १०४४ ई० तक तुर्कों से स्वतन्त्र हो गये । भोज ने राजस्थान का बड़ा अंश और गुजरात का कुछ अंश भी अपने अधीन किया ।

इसी समय अनंगपाल तोमर ने शायद भोज से प्रोत्साहना पा कर जमना के पच्छिम कुरुक्षेत्र या हरियाना प्रदेश में अपना राज्य स्थापित किया और पंजाब से पूरब और दक्खिन जाने वाले रास्तों पर चौकसी रखने के लिए दिल्ली नगरी की स्थापना की ।

सोमेश्वर चालुक्य ने राजराज चोळ से अपने दादा की हार का बदला लेते हुए उसके पोते राजाधिराज को तुंगभद्रा के किनारे कोप्पम् की लड़ाई में वीर गति दी (१०५२ ई०)। पर उसी रणभूमि में राजाधिराज के

भाई राजेन्द्र परकेसरी ने मुकुट पहना और सोमेश्वर को हरा दिया। यों दोनों पक्षों के समान रहने से तुंगभद्रा नदी चालुक्य और चोळ राज्यों के बीच सीमा मानी गई। १०६८ ई० में चोळों ने श्रीविजय पर भी प्रभुत्व छोड़ दिया।

चेदि के राजा कर्ण ने गुजरात के भीम सोलंकी के साथ मिल कर १०५४ ई० में भोज की धारा नगरी पर चढ़ाई की। उसी युद्ध में भोज की मृत्यु हुई।

राजा भोज का नाम भारत का बच्चा बच्चा आज भी जानता है। भोज का ज़माना कैसा विकट और उथल-पुथल वाला था इसकी याद लोगों को नहीं रही। भोज कैसा वीर और युद्धरसिक था इसे भी वे प्रायः भूल गये हैं। पर भोज कैसा विद्यानुरागी, जनता का हितचिन्तक और न्याय-पथ पर अटल रहने वाला राजा था इसकी याद आज भी उसका नाम लेते ही आ जाती है। इस अंश में भोज के विषय में जनता की जो धारणा है उसमें मिहिर भोज की स्मृति भी मिली हुई है। भोज के रामराज्य के बारे में जो बहुत सी बातें कही जाती हैं, वे वस्तुतः मिहिर भोज के बारे में हैं।

जिस साल धारा में भोज की मृत्यु हुई उसी साल जझौती में कीर्त्तिवर्मा चन्देल का अभिषेक हुआ। कुछ वर्ष बाद कीर्त्तिवर्मा ने चेदि के सर्व-विजयी कर्ण को परास्त किया (लग० १०७५ ई०)। चोळों के श्रीविजय का प्रभुत्व छोड़ देने और कर्ण के पराभव से कहना चाहिए कि भोज और कर्ण का ज़माना भी समाप्त हुआ।

६. विक्रमांक, चन्द्रदेव, सिद्धराज, पृथ्वीराज

भोज और कर्ण के अस्त होने के बाद सोमेश्वर चालुक्य का बेटा विक्रमांक या विक्रमादित्य भारत के अन्तरिक्ष में सब से अधिक चमकता प्रकट हुआ। वह अपने पिता से भी अधिक प्रतापी था, और उसके ५० बरस (१०७६–११२५ ई०) के प्रशासन में कल्याणी का दरबार भारत के दूसरे सब राज्यों में आदर्श माना जाता रहा। विज्ञानेश्वर नामक कानून का विद्वान् और कश्मीरी कवि बिल्हण, जो श्रीनगर के उत्तरपूरब केसर की क्यारियों वाले खोनमोप गाँव का रहने वाला था, विक्रमांक की सभा में थे। विज्ञानेश्वर ने याज्ञवल्क्य-स्मृति की टीका मिताक्षरा लिखी और उसके अन्त में लिखा—"पृथ्वी के तल पर कल्याण जैसा कोई नगर न था, न है, न होगा। विक्रमार्क

जैसा कोई राजा देखा या सुना नहीं गया।"

उत्तर भारत में कन्नौज साम्राज्य जब से पच्छिम के तुर्कों को कर देने लगा था तब से प्रजा उससे घृणा करने लगी और कई बार विद्रोह कर चुकी थी। १०८० ई० में चन्द्रदेव गाहड्वाल ने पुराने राजवंश को हटा कर कन्नौज को अपने हाथ में कर लिया, और दिल्ली के पड़ोस से बनारस तक का प्रदेश अधीन कर फिर से मजबूत राज्य स्थापित किया।

विक्रमांक चालुक्य कर्णाटक का राजा कहलाता और कर्णाटक के सैनिकों की ख्याति कई शताब्दियों से सारे भारत में थी। राजेन्द्र चोळ की बंगाल चढ़ाई से वहाँ के बहुतेरे सैनिक बंगाल से परिचित हो आये थे। लग० १०८० ई० में विजयसेन और नान्यदेव नामक दो कर्णाट सैनिकों ने पाल राजा से बंगाल और तिरहुत (मिथिला) छीन कर वहाँ अपने राजवंश स्थापित किये। विजयसेन ने पीछे पाल राजा से मगध भी छीनने का यत्न किया, और नान्यदेव के तिरहुत राज्य को भी अपने आधिपत्य में लेना चाहा, पर उन दोनों राजाओं ने चन्द्र गाहड्वाल से रक्षा पाई। मगध का पाल वंश तब से गाहड्वालों के

चित्र २४

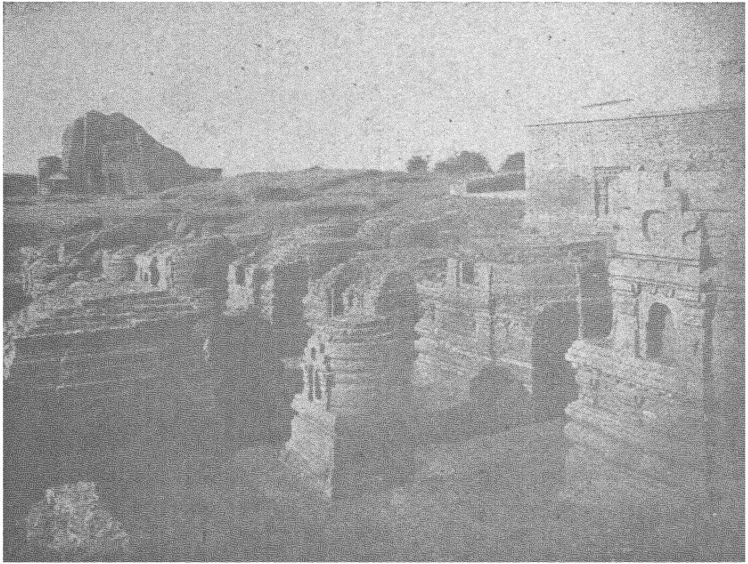

नालन्दा महाविहार के खँडहर [भा० पु० वि०]

चित्र २५

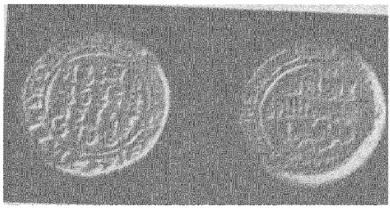

कलमे के संस्कृत अनुवाद सहित महमूद का चाँदी का टंका
[लाहौर संग्रहालय]

चित्र २६

फीरोजशाह के कोटले पर खड़ी अशोक की लाठ
जिसपर बीसलदेव का लेख भी खुदा है।

सामन्त रूप में रह गया। विजयसेन का वंश सेन वंश कहलाया और नान्यदेव का वंश कर्णाट वंश ही कहलाता रहा।

कर्णाटक का प्रभाव इस ज़माने में ऐसा था कि कश्मीर के राजा हर्ष ने, जो विक्रमांक का समकालिक था, अपने राज्य में ठीक कर्णाटक के नाप-तोल का टंका (सिक्का) चलाया और दरबार में कर्णाटक की वेशभूषा और चाल-ढाल की नकल की। हमारे ज़माने में पिछले पच्चीस वर्षों (१९३०–५५) में कर्णाटकी स्त्रियों का साड़ी पहनने का ढंग जैसे भारत के दूसरे बहुत से प्रान्तों की स्त्रियों ने अपना लिया है, वैसे ही हर्ष के प्रशासन में कश्मीर में हुआ था। हर्ष महमूद गज़नवी के मन्दिर तोड़ने और लूटने से भी प्रभावित हुआ था। उसने पहचान लिया था कि मन्दिरों की देव-मूर्त्तियों में कोई शक्ति नहीं है और उनमें बहुत फालतू धन जमा है। इसलिए उसने अपने राज्य में एक 'देवोत्पाटननायक' (देवताओं को उखाड़ने वाला अधिकारी) नियत किया, जिसका काम था चुपके चुपके देवमन्दिरों को भ्रष्ट कर देना और लोग उन्हें पूजना छोड़ दें तो उनकी सम्पत्ति ज़ब्त कर लेना।

इन राजाओं का पिछला समकालिक अणहिलवाड़े का चालुक्य राजा सिद्धराज जयसिंह हुआ। उसने भी आधी शताब्दी (१०९३-११४२ ई०) राज्य किया। भोज के मालवे के राज्य को जयसिंह के पूर्वज भीम ने चेदि के कर्ण के साथ मिल कर जीता था, पर कर्ण के कीर्त्तिवर्मा चन्देल से हारने के बाद वह राज्य फिर उठ खड़ा हुआ था। जयसिंह ने अब बारह बरस लड़ कर मालवे को फिर जीता। इस ज़माने के लोग मानते थे कि मन्त्र-तन्त्र आदि के अभ्यास से अनेक सिद्धियाँ होती हैं। जयसिंह को वैसी अनेक सिद्धियाँ प्राप्त थीं या वह उनके होने का दिखावा करता था, इसलिए उसने सिद्धराज पद धारण किया और वह उसी उपनाम से प्रसिद्ध है।

चन्द्र गाहड्वाल के बाद उसके पोते गोविन्दचन्द्र ने मगध और अंग (मुंगेर-भागलपुर) को भी जीत कर कन्नौज के राज्य को फिर साम्राज्य का पद दे दिया। गोविन्दचन्द्र के बेटे विजयचन्द्र और पोते जयच्चन्द्र के समय में भी मेरठ से मुंगेर-भागलपुर तक कन्नौज का साम्राज्य पूरे गौरव में बना रहा।

किन्तु चालुक्य साम्राज्य विक्रमांक के पीछे टूटने

लगा। ठेठ कर्णाटक में यादव वंश का एक राज्य खड़ा हुआ जिसकी राजधानी धोरसमुद्र (मैसूर राज्य में) थी। उस राजवंश का मज़ाक का नाम होयशल था। आन्ध्र देश में काकतीय राजवंश स्थापित हुआ जिसकी राजधानी ओरंगल थी। अन्त में देवगिरि (दौलताबाद) में एक यादव राजवंश उठा जिसने महाराष्ट्र भी चालुक्यों से ले लिया। यों कर्णाटक, आन्ध्र और महाराष्ट्र में तीन प्रादेशिक राज्य खड़े हो गये।

सिद्धराज जयसिंह के समकालिक और पड़ोसी उत्तरी राजस्थान के चौहान राजा अजयराज और आना थे। अजयराज ने अजमेर बसा कर उसे अपनी राजधानी बनाया। अजय के बेटे अर्णवराज या आना का बनवाया हुआ सुन्दर ताल आनासागर अजमेर को अब भी हरा भरा रखता है। आना को पहले तो सिद्धराज ने हराया, पर पीछे अपनी लड़की काञ्चनदेवी ब्याह दी। आना की पहली रानी मारवाड़ की राजकन्या सुधवा से दो पुत्र पैदा हुए और काञ्चनदेवी से सोमेश्वर। सुधवा के जेठे बेटे का नाम हम नहीं जानते, छोटे का नाम विग्रहराज उर्फ़ वीसल-देव था। जेठे पुत्र ने अपने पिता को मार डाला, इसलिए

उस युग के चरित-लेखकों ने उसका नाम इतिहास से मिटा दिया। आना के बाद बीसलदेव को गद्दी मिली।

बीसलदेव ने ११५० ई० के लगभग तोमरों से दिल्ली और हाँसी को जीत कर सरहिन्द और शिवालक तक अपना राज्य फैला लिया* और पंजाब के तुर्कों को पीछे धकेला। दिल्ली में फीरोज़शाह के कोटले पर अशोक की जो लाट खड़ी है वह तब अम्बाले के उत्तर शिवालक की तराई में साधौरा नामक स्थान पर थी—१४वीं शताब्दी में फीरोज़-शाह उसे वहाँ से उठवा कर दिल्ली ले आया। उस लाट पर अशोक के लेख के नीचे बीसलदेव ने अपना लेख खुदवाया जिसमें वह कहता है—"विन्ध्य से हिमाद्रि तक तीर्थयात्रा करते हुए राजा बीसल ने विजय किया... म्लेच्छों (विदेशियों) को उखाड़ कर आर्यावर्त को फिर आर्यावर्त्त बनाया।... चौहान राजा विग्रहराज अब अपनी सन्तान से कहता है कि इतना तो हमने किया, बाकी लेने का उद्योग तुम मत छोड़ना।"

बीसलदेव के पीछे उसके लड़के अपर-गांगेय और उसके बाद बीसलदेव के बड़े भाई के लड़के ने राज

* देखिए परिशिष्ट-टिप्पणी।

किया, जिसके बाद सोमेश्वर को गद्दी मिली। सोमेश्वर का विवाह त्रिपुरी के राजा अचलराज की बेटी कर्पूरदेवी से हुआ था।* उनका पुत्र पृथ्वीराज हुआ। सोमेश्वर अधिक दिन राज नहीं कर सका। उसकी मृत्यु पर कर्पूरदेवी अपने बेटे के नाम पर राजकाज चलाती रही। सत्रह बरस का होने पर ११७९ ई० में जब पृथ्वीराज अजमेर की गद्दी पर बैठा तब उसके पच्छिम और उत्तर तरफ नये बनाव बन रहे थे।

महमूद के पीछे ग़ज़नी की सल्तनत लगातार क्षीण होती गई थी। ग़ज़नी से हरात के रास्ते पर फ़रा नदी (फ़रा रूद§) की दून में गोर प्रदेश है। वहाँ के सरदार अलाउद्दीन ने महमूद के वंशज खुसरो के प्रशासन में ग़ज़नी पर चढ़ाई कर उसे सात दिन तक लूटा और जला कर ख़ाक कर दिया। खुसरो भाग कर लाहौर आ गया। यह घटना तब हुई जब इधर बीसलदेव दिल्ली से सरहिन्द तक जीत कर ग़ज़नवी तुर्कों को पूरब से दाब रहा था।

अलाउद्दीन का उत्तराधिकारी उसका भतीजा मुहम्मद-

* देखिए परिशिष्ट-टिप्पणी।

§ रूद माने नदी।

बिन-साम (साम का बेटा मुहम्मद) हुआ जो शहाबुद्दीन गोरी नाम से प्रसिद्ध है। ग़ज़नी का राज्य पाने के बाद शहाबुद्दीन ने उच्च के भाटी राजा की रानी से षड्यन्त्र कर वह राज्य हथिया लिया, और फिर मुलतान-सिन्ध भी जीत लिये। उसके बाद महमूद ग़ज़नवी के पगचिह्नों पर चलते हुए ११७८ ई० में उसने गुजरात पर चढ़ाई की। गुजरात का राजा मूलराज २य तब बच्चा था। उसकी माँ ने आबू पहाड़ के नीचे कायद्रां गाँव पर गोरी का सामना किया। उस लड़ाई में गोरी बुरी तरह हार कर भाग गया, उसकी फ़ौज का बड़ा अंश कैद हुआ। उन कैदियों की दाढ़ी-मूँछ मुँडा और उन्हें हिन्दू बना कर गुजरातियों ने अपनी जातों में मिला लिया।

गोरी की जो सेना मुलतान-सिन्ध से आबू तक बढ़ी वह अजमेर राज्य की पच्छिमी सीमा के पास से ही लाँघी थी और उसका हल्ला अजमेर में भी सुनाई दिया होगा। पर पृथ्वीराज ने उसपर कान न दिया, न उसने अपने ताऊ बीसलदेव की शिक्षा पर ध्यान दे कर सरहिन्द के आगे "बाकी लेने का उद्योग" किया। लाहौर और मुलतान-सिंध की दो मुस्लिम सल्तनतों की गति-विधि पर नज़र रखने, उस

तरफ अपनी सीमा को पक्का करने और इसके लिए अपने पूरब के हिन्दू राज्यों से मैत्री रखने या सहयोग लेने के बजाय उसने उन्हीं में से एक के विरुद्ध अपनी बहादुरी और अपने राज्य की शक्ति बरबाद की।

जझौती का राज्य जमना के दक्खिन दक्खिन ग्वालियर से कालंजर तक फैला हुआ था। महमूद के समय वह कन्नौज से भी अधिक शक्तिशाली था और उसने दो बार काबुल-ओहिन्द और भेरा के शाहि राज्य की सहायता के लिए अपनी सेना को कुर्रम और अटक तक भेजा था। फिर उसी जझौती के राजा कीर्तिवर्मा चन्देल ने चेदि के कर्ण को हराया था। पृथ्वीराज ने राज पाते ही कीर्तिवर्मा के वंशज परमर्दी पर चढ़ाई की और तीन बरस के युद्ध के बाद चम्बल से धसान नदी तक का प्रदेश उससे छीन लिया।

उधर गोरी ने गुजरात की तरफ दाल गलती न देख ठेठ हिन्दुस्तान की ओर मुँह फेरा और खुसरो के बेटे से पंजाब छीन लिया। उसके बाद उसने आगे बढ़ कर सर-हिन्द का गढ़ हथिया लिया जो बीसलदेव के ज़माने से अजमेर राज्य के अधीन चला आता था। पृथ्वीराज तब

गोरी का सामना करने बढ़ा। पानीपत के पास तरावड़ी गाँव में लड़ाई हुई जिसमें शहाबुद्दीन हार कर और घायल हो कर भागा (११९१ ई०)। पर गोरी हारों से हिम्मत हारने वाला न था, वह स्थिर-संकल्प और दृढव्रती पुरुष था। दूसरे ही बरस वह फिर सेना ले कर आया। तरावड़ी के मैदान में ही फिर लड़ाई हुई जिसमें कैद हो कर पृथ्वीराज मारा गया। दिल्ली और अजमेर गोरी के शासन में चले गये, कन्नौज का साम्राज्य उसके हमलों के लिए खुल गया।*

परिशिष्ट-टिप्पणी

पृथ्वीराज की सभा में कश्मीरी कवि जयानक था, जिसका लिखा पृथ्वीराज-विजय काव्य उपलभ्य है। चौहान राजवंश पीछे रणथम्भोर और बूँदी में रहा, जहाँ उसके इतिहास-विषयक दो और काव्य लिखे गये। संस्कृत और फारसी में लिखे इस युग के अन्य अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थ तथा चौहानों और उनके समकालिक राजवंशों के पचासों अभिलेख भी प्राप्य हैं। उन सब का वृत्तान्त आपस में मेल खाता है और ऊपर जो वृत्तान्त दिया गया है सो उनके अनुसार। किन्तु चन्द बरदाई के 'पृथ्वीराजरासो' की कहानी

* देखिए परिशिष्ट-टिप्पणी।

उन सब से निराली है। पिछले ५०-६० बरस से वह कहानी जनता में बहुत चल चुकी है, इसलिए उसके विषय में कहना आवश्यक है।

(१) रासो का लेखक यह नहीं जानता था कि अनंगपाल तोमर पृथ्वीराज से सवा शताब्दी पहले हो चुका था और कि दिल्ली वीसलदेव ने जीती थी। पृथ्वीराज की माँ कौन थी सो भी उसे मालूम न था। सो उसने यह कल्पना की कि अनंगपाल तोमर की दो बेटियाँ थीं सुन्दरी और कमला, जिनमें से पहली का लड़का पृथ्वीराज था और दूसरी का कन्नौज का राजा जयचंद, और कि अनंगपाल ने दिल्ली का राज्य अपने दोहते पृथ्वीराज को दिया था।

(२) मेवाड़ के रावल समरसिंह को चंद बरदाई ने पृथ्वीराज का बहनोई बनाया है। पर समरसिंह के आठ शिलालेख विक्रम संवत् १३३० से १३५८ तक के मिले हैं। उसके पिता और दादा के लेख भी मिले हैं। उन सब से सिद्ध है कि वह पृथ्वीराज से सौ बरस पीछे हुआ।

(३) पृथ्वीराज की मृत्यु ३० बरस की आयु में हुई थी। पर चन्द बरदाई उसके १४ विवाह ११ से ३६ बरस की आयु तक कराता है। उनमें से पहला विवाह वह प्रतिहार नाहड़देव की लड़की से बताता है, जो साढ़े तीन शताब्दी पहले हो चुका था! बाकी विवाहों की कहानियाँ भी वैसी ही हैं।

(४) चन्द के अनुसार कन्नौज के राजा राठोड थे, जयचंद के पिता विजयपाल ने सेतुबन्ध रामेश्वर तक दिग्विजय किया था,

जयचंद ने राजसूय यज्ञ कर के अपनी बेटी संयोगिता का स्वयंवर रचा, पृथ्वीराज संयोगिता को हर ले गया, पीछे जयचंद ने वैर-वश शहाबुद्दीन को बुलाया, इत्यादि। पर कन्नौज के राजा गाहड्वाल थे, राठोड नहीं। जयच्चन्द्र बड़ा दानी राजा था. उसके अनेक दान-लेख उपलब्ध हैं। यदि उसके पिता ने भारत-दिग्विजय और उसने राजसूय किया होता तो अपने लेखों में वह इसका उल्लेख करने से न चूकता; उसके पिता के रामेश्वरम् तक जीतने की बात का दूसरे राज्यों के लेखों से भी पता मिलता।

वास्तव में यह सारी कहानी कल्पित है। संयोगिता भी कल्पना की उपज है, उसी प्रकार जयचन्द द्वारा गोरी को बुलाये जाने की बात भी।

(५) रासो के अनुसार पृथ्वीराज का पिता सोमेश्वर गुजरात के राजा भीम के हाथों मारा गया, तथा पृथ्वीराज ने गुजरात पर चढ़ाई कर भीम को मार डाला। पर अभिलेखों से जाना गया है कि भीम जब गद्दी पर बैठा तब बच्चा ही था, सोमेश्वर की मृत्यु उसके अगले वर्ष ही हो गई जो भीम के हाथों नहीं हो सकती थी, तथा भीम पृथ्वीराज के ५० वर्ष पीछे तक जीवित रहा।

(६) रासो में दी हुई चौहानों की वंशावली अभिलेखों तथा अन्य ग्रन्थों से मिलान करने पर सर्वथा कल्पित प्रकट होती है। रासो में दिये घटनाओं के संवत भी गलत हैं।

(७) रासो के अनुसार रावल समरसिंह का बेटा अपने पिता से रूठ कर दक्खिन में बिदर के सुलतान के पास चला गया था,

एवं सोमेश्वर और पृथ्वीराज ने मेवात के मुगल पर चढ़ाई की थी जिसमें मुगल कैद हुआ और उसका बेटा वाजिदखां मारा गया। बिदर की सल्तनत १४३० ई० में स्थापित हुई तथा मुगल भारत में १६वीं शताब्दी में आये।

उक्त नमूनों और अन्य कितनी ही बातों से सिद्ध होता है कि पृथ्वीराजरासो १६वीं शताब्दी की रचना है, और उसकी कहानी निरा तोता-मैना का किस्सा है, जिसमें कुछ भी ऐतिहासिक तत्त्व नहीं है।

—:०:—